चारा पत्रिका

वर्ष 15 पंजीकरण संख्या ISSN–0973–7979 जनवरी – जून, 2013 अंक

संरक्षक
डॉ. पी के. घोष
निदेशक

संपादक मंडल :
सुनील कुमार
प्रधान वैज्ञानिक
पी.एन.द्विवेदी
प्रधान वैज्ञानिक
एन.के.शाह
प्रधान वैज्ञानिक
आर.बी. भास्कर
वरिष्ठ वैज्ञानिक
प्रदीप कुमार त्यागी
सहा. मु. तक. अधिकारी

संपादक :
केशव देव
सहायक निदेशक (राजभाषा)

सहयोगी :
श्रीआंशकुमार द्विवेदी
निजी सचिव
अशोक कुमार सिंह
फोटोग्राफर

प्रकाशक :
निदेशक
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान,झांसी
दूरभाष : +91 510 2730666 **फैक्स :** +91 510 2730833
वेबसाइट : http:/igfri.ernet.in
ई–मेल : igfri @ igfri .ernet.in

संपर्क सूत्र :
राजभाषा अनुभाग
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर मार्ग, झांसी–284003 (उ.प्र.)

मुद्रक

वीर बुन्देलखंड प्रेस,
झांसी

विषय सूची

निदेशक की कलम से .....

1. जुलाई – दिसम्बर माह में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि एवं पशुपालन क्रियाएं
2. पशुधन विकास एवं ग्रामीण उन्नति का नया मार्ग : कृत्रिम गर्भाधान
   मनीष कुमार अवस्थी, सुधीर कुमार रावत, विकास कुमार एवं सरजू नारायन
3. अपराजिता एक बहुउद्देशीय दलहनी चारा
   अर्चना सिंह
4. केन्द्रीय बजट 2013–14 : कृषि,पशुओं तथा चारे के लिए बहुत कुछ
   डी.आर. पलसानिया, सुनील कुमार, एस.के.रॉय एवं ए.के.रॉय
5. पौध संरक्षण में प्रयोग होने वाले यंत्र व उनका उपयोग
   प्रदीप सक्सेना, प्रदीप कुमार त्यागी, एन.के.शाह, आर. बी.भास्कर, एम.आई. आजमी एवं शाहिद अहमद
6. पौष्टिक चारे हेतु दशरथ घास
   दिनेश चन्द्र जोशी एवं तेजवीर सिंह
7. संकर नेपियर घास की खेती–सघन नर्सरी विधि
   डी.विजय, चन्दन कुमार गुप्ता , दिवाकर बहुखंडी एवं डी.आर. मालवीय
8. ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक–चारे एवं अन्य कृषि उत्पादों को सुखाने हेतु लाभकारी संयत्र
   संजय कुमार सिंह एवं प्रभाकांत पाठक
9. ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी
   जे.पी.उपाध्याय, सत्यप्रिय एवं पी.शर्मा
10. ट्रैक्टर की सामयिक देखभाल, इंजन की साधारण खराबियां और सम्भाल
    चन्द्रशेखर सहाय एवं जी.आर. देशमुख
11. बकरी पालन : सीमान्त एवं लघु किसानों हेतु लाभकारी व्यवसाय
    साधना पाण्डेय, आर.के. शर्मा, पुरुषोत्तम शर्मा एवं विकास कुमार
12. तीव्र जलवायु परिवर्तन के दौर में हरे चारे की उपलब्धता कैसे करें।
    विकास कुमार, सत्यप्रिय, मंजू सुमन एवं साधना पाण्डेय
13. चारा उत्पादन एवं पशुपालन प्रबंधन में महिलाओं का योगदान
    मंजू सुमन एवं अशोक कुमार
14. संस्थान की प्रचार–प्रसार गतिविधियां .....

नोट : पत्रिका में दी गई तकनीकी जानकारी, ऑकड़े एवं विचारों के लिए संपादक मंडल/संपादक उत्तरदायी नहीं है। इस हेतु लेखक से सीधे संपर्क करें।

निदेशक की कलम से ————————————————————

भारत एक कृषि प्रधान देश है और प ुधन बिना कृषि अधूरी है। भारतीय कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में वर्ष 2011–12 के दरमियान 14.1 प्रतिशत योगदान था जिसका एक–तिहाई (30 प्रतिशत) पशुधन से आता था और पशुधन का यह योगदान निःसन्देह आने वाले वर्षों में तेजी से बढ़ेगा। अठारहवीं पशु गणना (2007) के अनुसार भारत में अनुमानित कुल 53 करोड़ पशु हैं, जो कि विश्व के कुल पशुओं का लगभग 20 प्रतिशत हैं। भारत संख्या के आधार पर विश्व की क्रमशः 16 प्रतिशत गायें तथा 55 प्रतिशत भैंसें रखते हुये प्रथम स्थान पर हैं। बकरियों की संख्या में भारत का दूसरा (22 प्रतिशत) तथा भेड़ों की संख्या में चौथा (5 प्रतिशत) स्थान हैं। इसी तरह 2011–12 के नवीनतम आँकड़ों के अनुसार 12.8 करोड़ टन उत्पादन के साथ भारत दुनिया का सर्वाधिक दुग्ध उत्पादक देश है। पशु करोड़ों की संख्या में लोगों को रोजगार प्रदान करने के अलावा जीवांश खाद, परिवहन, पॉवर, ईंधन, मांस, ऊन, चमड़ा आदि उपलब्ध कराकर अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। हाल ही के वर्षों में लोगों की खान–पान के सुधार एवं स्तर में तेजी से बदलाव आ रहा है जिससे पशु आधारित भोजन की माँग लगातार बढ़ रही है।

अतः आने वाले वर्षों में पशुधन का महत्व और अधिक बढ़ने वाला है। इतना अधिक महत्व होने के बावजूद आज जब हम भारत के पशुधन की उत्पादकता की बात करते हैं तो वह विश्व में न्यूनतम है। साथ ही जब हम भारतीय पशुधन की कम उत्पादकता के कारणों का विश्लेषण करते हैं तो पशुओं के लिये अच्छी गुणवत्ता वाले चारे की पर्याप्त मात्रा में वर्ष पर्यन्त उपलब्धता न होना एक बड़े कारण के रूप में उभर कर सामने आता है। वर्तमान में देश में अनुमानित 35 प्रतिशत हरे चारे की, 11 प्रतिशत सूखे चारे की तथा 44 प्रतिशत दाने की कमी है, जो कि आने वाले समय में यह बढ़ती ही जायेगी। अतः इस खाई को कम करने के लिये न केवल हमें हमारे पारम्परिक चारे के स्रोतों पर ध्यान देना होगा बल्कि अन्य विकल्पों पर भी अमल करने की आवश्यकता है।

हमारे संस्थान के वैज्ञानिकगण इसी दिशा में अपने शोध कार्यों में रत हैं। प्रस्तुत अंक में पूर्व की तरह हमारे किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि एवं पशुपालन क्रियाओं का समावेश करते हुए पशुधन विकास एवं ग्रामीण उन्नति का नया मार्ग : कृत्रिम गर्भाधान, अपराजिता एक बहुउद्देशीय दलहनी पौधा, केन्द्रीय बजट 2013–14 : कृषि, पशुओं तथा चारे के लिए बहुत कुछ, पौध संरक्षण में प्रयोग होने वाले यंत्र व उनका उपयोग, पौष्टिक चारे हेतु दशरथ घास, संकर नेपियर घास की खेती–सघन नर्सरी विधि, ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक–चारे एवं अन्य कृषि उत्पादों को सुखाने हेतु लाभकारी संयत्र, ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी, ट्रैक्टर की सामयिक देखभाल, इंजन की साधारण खराबियां और सम्भाल, बकरी पालन : सीमान्त एवं लघु किसानों हेतु लाभकारी व्यवसाय, तीव्र जलवायु परिवर्तन के दौर में हरे चारे की उपलब्ध्ता कैसे करें, चारा उत्पादन एवं पशुपालन प्रबंधन में महिलाओं का योगदान इत्यादि विषयों पर महत्वपूर्ण जानकारी दी गई है। निश्चित ही यह अंक आपको उपयोगी साबित होगा, मुझे ऐसी आशा है। मैं इसके लेखकगणों व संपादक मंडल को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। यह अंक आपको कैसा लगा, के बारे में अपनी प्रतिक्रियाएं/सुझाव अवश्य भेजें । यदि आप भी चारे व पशुओं से संबंधित जानकारी प्रकाशनार्थ भेजना चाहते हैं तो वह सादर आमंत्रित है ।

(डॉ. पी के. घोष)
निदेशक

जुलाई – दिसम्बर माह में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि एवं प ुपालन कियाएं

जुलाई :

फसलोत्पादन :

धान –

- जुलाई मास कृषि कार्यों के लिये सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है।
- इस माह धान की रोपाई पूर्ण कर लें। रोपाई के लिये 40 दिन पुरानी पौध का प्रयोग करें। मक्का, ज्वार, बाजरा, मूंगफली, उर्द, मूंग आदि की बुवाई क्षेत्र विशेष के लिये समर्थित कियाओं के अनुसार करें। बहुवर्षीय घासों की रोपाई 100X50 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में करें।

मक्का, ज्वार, बाजरा, मूंगफली, उर्द, एवं मूंग –

- समय से बोयी गयी मक्का, ज्वार, बाजरा,उर्द, मूंग एवं मूंगफली में निराई–गुड़ाई करें तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. करें।
- मूंगफली की फसल 35–40 दिनों की होने पर निराई–गुड़ाई करें एवं मिट्टी चढ़ाएं। सोयाबीन की भी निराई–गुड़ाई करें।
- खरीफ चारा फसलें जैसे–ज्वार, बाजरा, मक्का, ग्वार, लोबिया के लिए खेत की 2–3 जुताई करें। जुलाई के दूसरे एवं तीसरे सप्ताह में बीजों की बुवाई करें।
- बुवाई के समय बीजों का थीरम तथा बैविस्टन (2.5 ग्रा./कि.ग्रा. बीज की दर से) उपचार कर बोएं। बुवाई के तुरन्त बाद एवं अंकुरण से पहले ज्वार, बाजरा एवं मक्का में एट्राजीन (1.5 कि. ग्रा./हे. 600 लीटर पानी में) का छिड़काव करें।
- समय से बोयी गयी बाजरा, ज्वार एवं मक्का में थिनिंग के पश्चात् नत्रजन की शेष मात्रा डालें।

बागवानी :

कलमी पौधे –

- गड्ढे की भराई करें। दो या तीन अच्छी वर्षा हो जाए तब गड्ढ़ों में कलमी पौध की रोपाई करें।
- अच्छी वर्षा होने पर बहुउद्देशीय पौध लगाएं। विगत वर्ष लगाए गए बागों में मरे पौध की जगह नई पौध लगाएं।
- आंवले के पुराने/बीज पौध में कलिकायन कर अच्छी किस्मों में बदलें। खरीफ सब्जियों की बुवाई करें।

दलहनी चारा :

- अच्छी वर्षा होने पर घास की रोपाई 50X50 सेमी. पर करें। यदि बीच में दलहनी चारा लगाना हो तो 100X50 सेमी. की दूरी पर घास की रोपाई करें और बीच में दलहनी चारे की एक पंक्ति डालें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- वर्षा शुरु होते ही वृक्षों की रोपाई वाले गड्ढ़ों में क्षेत्र की यथा आवश्यकता वृक्षों की रोपाई करें।
- फसलों की उत्तम पैदावार हेतु खेतों की मेंड़ों की मजबूत मेंड़बन्दी करें,
- शुष्क क्षेत्रों में बाजरा, ग्वार के साथ खेजड़ी के वृक्षों की स्थापना करें।
- पानी की उपलब्धता को ध्यान में रखकर अन्न, चारा एवं नकदी फसलों के साथ स्थानीय आवश्यकता मिट्टी और जलवायु को ध्यान में रखकर वृक्षों की प्रजातियों की रोपाई करें।
- पोषक तत्वों की उपलब्धता, नमी के संरक्षण, खरपतवारों की रोकथाम, आदि हेतु वृक्षों की पत्तियां का बिछावन आदि करें।
- फसलों की पंक्तियों में वृक्षों की पत्तियां, बिछावन आदि बिछाएं। यह किया बुवाई से पूर्व उर्वरकों के मिश्रण के साथ भी की जा सकती है।

- खरपतवारों को नष्ट करते हुये खेत के एक कोने में सुपर फॉस्फोट एवं अमोनियम फॉस्फोट के मिश्रण से सुपर कम्पोस्ट बनाएं और उर्वरकों के साथ फसलों में प्रयोग करें।
- खेतों की खाली मेंड़ों पर वृक्षों एवं चारा घासों की रोपाई करें जिससे फसलों की पैदावार एवं पशुओं के लिए चारा प्राप्त होता रहे।

बहुवर्षीय चारे –

- बहुवर्षीय घासों में रोपाई के समय 60:40 कि.ग्रा. नत्रजन एवं फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से डालें।
- गिनी, नेपियर, सिटेरिया बहुवर्षीय चारा घासों की रोपाई करें और स्थापित घासों की कटाई 40 से 45 दिनों के अंतर पर करते रहें तथा कम अंतराल पर पानी और यथा आवश्यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट डालते रहें।
- गिनी, नेपियर,सिटेरिया की रोपाई हेतु 20 सेमी. गहराई की नाली बनाएं और 50 सेमी. की दूरी पर दो से तीन घास की जड़ों की लगातार रोपाई करें।
- जून के शुरुआत में बोई गई चरी की कटाई करें।
- बहुवर्षीय चारों की कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् 30 कि.ग्रा. नत्रजन/हे. की दर से छिड़काव करें।
- अंजन, मार्बल, एवं धामन घासों की तैयार नर्सरी से खेतों में रोपाई करें ।
- स्टाइलो दलहनी चारे की बुवाई करें ।

पशुपालन :

- ज्यादातर भेड़ एवं बकरियों में प्रजनन जुलाई एवं अगस्त में होता है । इस समय इन्हें 150–200 ग्रा. अतिरिक्त दाना खिलाने से इनमें जुड़वां बच्चे पैदा होने की संभावना बढ़ जाती है।
- वर्षा ऋतु में मक्खी एवं मच्छर का प्रकोप बढ़ जाता है। पशुओं को इनसे बचाने के लिए धुएं इत्यादि का प्रबंध रात में करना चाहिए।

———————

अगस्त :

फसलोत्पादन :

धान –

- धान की शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की बुवाई पूर्ण करें। देर से पकने वाली प्रजातियों की बुवाई अब न करें।

बाजरा –

- बाजरा की बुवाई यदि रह गयी हो तो शीघ्र पूर्ण करें।

उर्द मूंग –

- उर्द मूंग में यदि गुड़ाई न की गयी हो तो गुड़ाई कर दें।
- सोयाबीन में पहली निराई होने के 20–25 दिन बाद दूसरी निराई गुड़ाई करें।

मूंगफली –

- मूंगफली में दूसरी निराई–गुड़ाई बुवाई के 30–40 दिन बाद करके मिट्टी चढ़ाने का कार्य करें।

फसल संरक्षण :

धान –

- धान की रोपाई के 25–30 दिन बाद अधिक उपज वाली प्रजातियों 25–30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से डालें। मक्का में नरमंजरी निकलते समय 40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हे.की दर से छिड़काव करें।

ज्वार, बाजरा, मक्का अथवा लोबिया :

- समय से बोई गयी अधिक उत्पादन वाली बाजरा प्रजातियों में नाइट्रोजन की शेष मात्रा (30–40 कि.ग्रा.) का छिड़काव करें।

- चारे के लिए बोई गयी ज्वार, बाजरा, मक्का अथवा लोबिया आदि की कटाई करें।
- ज्वार, बाजरा की 2 कटाई वाली प्रजातियों में 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन/हे. की दर से छिड़काव करें। छिड़काव के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- चारा की सभी फसलों की गुड़ाई एवं निराई करें।

बागवानी :

कलमी पौधे –

- कलमी पौधों की रोपाई करें। विगत वर्ष लगाए गए बागों में मरे हुए पौधों की जगह दूसरे पौधे लगाएं।
- खरीफ सब्जियों की रोग/कीट से सुरक्षा करें तथा जल निकास की व्यवस्था करें।
- वन–पौध/बहुउद्देशीय पौध की रोपाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- घास की रोपाई करें। विगत वर्ष लगाए गए चरागाह में मरे हुए पौध की जगह नई घास के पौध की रोपाई करें।
- यदि पुराने चरागाह में चारा की अच्छी बढ़त हो गयी हो तो हरा चारे की एक कटान अगस्त के अंत में कर लें।
- खाद्यान्न एवं नकदी फसलों की खेती के साथ–साथ फसलों एवं वृक्षों की रोपाई करें जिससे
  पशुओं को चारा एवं लकड़ी तथा अपने लिये खाद्यान्न एवं नकद राशि प्राप्त होती रहे।
- भावी पीड़ियों के जीवन संरक्षण हेतु वर्षा के जल का सही एवं स्वस्थ संरक्षण आवश्यक है और इस कार्य हेतु भारत सरकार की जल संचयन योजनाओं का भरपूर लाभ उठाएं।
- वर्षा ऋतु में यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता के कारण पशुओं को चारा प्राप्त होता रहता है फिर भी किसान खाद्यान्न एवं नकदी फसलों के साथ वृक्षों एवं चारा घासों की स्थापना द्वारा पूरे वर्ष पशुओं के लिये चारा प्राप्त कर सकते हैं।

बहुवर्षीय घास –

- बहुवर्षीय घासों की रोपाई यदि जुलाई माह में पूर्ण न हो पाई हो तो शीघ्र पूर्ण करें।
- गिनी, नेपियर, सिटेरिया बहुवर्षीय स्थापित चारा घासों की कटाई 40 से 45 दिनों के अंतर पर करते रहें तथा कम अंतराल पर पानी और यथा आव यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट डालते रहें।
- वर्षाऋतु में इन घासों की पुरानी जड़ें जो सड़ गल गई हैं और काले रंग की हो जाती है, तो उन्हें श्रमिकों अथवा ऑफबारिंग ट्रैक्टर चालित मशीन से कटाई करते रहना चाहिए। जिससे नई जड़ों एवं घासों के किल्लों को निकलने में आसानी होती है।

फसल संरक्षण :

- चूकि इस मौसम में हरे चारे की उपलब्धता बढ़ जाती है , अतः इस समय हरे चारे को साइलेज के रूप में संरक्षित कर लेना चाहिए।

पशुपालन :

- इस मौसम में चारे में शुष्क पदार्थ की मात्रा काफी कम होती है जिससे पशुओं का पेट नहीं भर पाता हैं अतः पशुओं को सूखा चारा 2–4 कि.ग्रा./व्यस्क पशु के हिसाब से खिलाना चाहिए।

———

सितम्बर :

फसलोत्पादन :

तोरिया –

- तोरिया की बुवाई के लिए सितम्बर का दूसरा पखवाड़ा उत्तम है। अतः प्रथम पखवाड़े में खेत तैयार कर उसके बाद बुवाई करें। बुवाई के लिए 4–5 कि.ग्रा. उपचारित (3.5 ग्रा. डायथेनम एम–45/कि.ग्रा.) बीज प्रति हेक्टेयर 30 सेमी की दूरी पर कतार में करें। कूड़ों की गहराई 3–4 सेमी से अधिक नहीं होनी चाहिए।

- तोरिया के लिये सिंचित दशाओं में 50 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग कूड़ों के बगल में पट्टी के रूप में या छिड़काव द्वारा करें। जबकि असिंचित क्षेत्रों में उर्वरक की दर 50 कि.ग्रा. नत्रजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फेट एवं 30 पोटाश कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर रखें। फॉस्फोरस के लिये विशेषकर सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करें। उक्त उर्वरक उपलब्ध न होने पर 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर का भी प्रयोग करें।

धान –

- धान में बालियां फूटने एवं फूल निकलते समय पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- धान में दूसरी/अन्तिम टॉप ड्रेसिंग बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था (रोपाई के 50–55 दिन) पर करें। टॉप ड्रेसिंग की दर अधिक उपज वाली प्रजातियों में 30 कि.ग्रा. नत्रजन एवं सुगंधित प्रजातियों में 15 कि.ग्रा./हेक्टेयर रखें।

मक्का –

- दाने वाली मक्का में बारिश होने की दशा में जल निकास की व्यवस्था करें। लेकिन यदि भूमि में नमी की कमी हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। क्योंकि फसल में नर मंजरी निकलने की अवस्था एवं दाने की दूधियावस्था में जल की समुचित उपलब्धता अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
- जुलाई के द्वितीय पखवाड़े या अगस्त के प्रथम सप्ताह में चारे के लिये बोयी गयी मक्का की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें। साथ ही 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

ज्वार –

- दाने वाली ज्वार से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये भूमि में जल की कमी होने पर बाली निकलते या दाना भरते समय सिंचाई करें।
- जुलाई के द्वितीय पखवाड़े या अगस्त के प्रथम सप्ताह में चारे के लिये बोयी गयी ज्वार की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें
- बहुकटाई वाली ज्वार की भी कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें। साथ ही 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

बाजरा –

- बाजरा की उन्नत/संकर प्रजातियों में नत्रजन की शेष आधी मात्रा (40–50 कि.ग्रा.) बुवाई के 25–30 दिन बाद करें। दो कटाई वाली बाजरा में भी 40–50 कि.ग्रा. नत्रजन का छिड़काव पहली कटाई के पश्चात् करें।
- बहुकटाई वाली बाजरा की भी कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें साथ ही 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

लोबिया –

- लोबिया की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें साथ ही 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

दलहनी एवं सोयाबीन –

- लम्बे समय तक बारिश न होने पर उर्द, मूंग एवं सोयाबीन में फलियां बनते समय पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिऐ हल्की सिंचाई करें।

मूंगफली –

- मूंगफली में खूँटियां बनाते समय एवं फली भरने की अवस्था में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिये आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करें तथा अधिक वर्षा होने पर उचित जल निकास की व्यवस्था करें।
- मूंग एवं तिली आदि की कटाई करें।

बहुवर्षीय घास –

- बहुवर्षीय घासों में कटाई के पश्चात् 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर का छिड़काव करें।
- पशुधन की आवश्यकता के लिये रोपी गई बहुवर्षीय गिनी, नेपियर, सिटेरिया की कटाई करें ,यथा आवश्यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट खाद डालते रहें।
- यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता बनी रहती है फिर भी इन घासों को स्वयं के ज्ञान के आधार पर अंतराल निर्धारित कर यथा आवश्यकता पानी लगाएं और बराबर कटाई करते रहें।
- पैरा, सिटेरिया, कल्लर, मछौरी जैसी बहुवर्षीय घासों को मार्च–अप्रैल में जिन किसान भाइयों ने स्थापना की है वहां, वर्षा के जल भराव निश्चित है अतः घासों की भरे हुये जल के ऊपर से ही कटाई करें।
- घासों को पूर्ण रूप से न डूबने दें अन्यथा जल भराव से चारा घासें मर सकती हैं।

बागवानी :

कलमी पौधे –

- वर्षा ऋतु में रोपित फलों के कलमी पौधों की मूलवृत्त तथा संकुर शाखा से निकलने वाले अवांछनीय शाखाओं को काटें।
- थालों में नमी की कमी हो तो जीवनयापन हेतु हल्की सिंचाई करें तत्पश्चात् थालों की गुड़ाई करें।

बेर –

- बेर के फल वृक्ष पर सूक्ष्म तत्वों एवं वृद्धि नियामक दवा(नेप्थलीन एसीटीक एसिड) का 20 बूंद/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यदि पत्तियों पर पत्ती छेदक कीट का प्रकोप दिखे तो इण्डोसल्फान का 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

आंवला –

- आंवला में फलों के झड़ने को कम करने हेतु वृद्धि नियामक दवा छिड़कें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- वर्षा रोपित पौधों को कृत्तन कर सही आकार दें।
- जीवनयापन हेतु पानी देकर थालों की गुड़ाई करें।
- पुराने पौधों को कटाई–छंटाई द्वारा सही आकार दें।
- रोपित पौध को जीवन यापन हेतु 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहें।
- प्राकृतिक एवं बोए हुए चरागाहों से घासों की कटाई आरंभ करें। घास की कटाई के बाद उन्हें इकट्ठा करें। खेतो में छोटे बंडल बनाकर सूखने के लिए रखें। सूखे घास की गठरी बनाएं।
- खरीफ में बोई गई फसलों की निराई–गुड़ाई करें।
- जल भराव के समय भी घासों की बढ़वार के लिये नत्रजन की आवश्यकता होती है अतः यूरिया के बड़े दाने अथवा पर्त कोटेड यूरिया से नत्रजन की पूर्ति करनी चाहिए।
- चरागाहों एवं बंजर भूमियों पर जहां चारा घासें बहुतायत से लगाई गई हैं उनसे प्राप्त चारा फसलों के बीज पक जाते हैं इन्हें श्रमिकों द्वारा, बैल चालित अथवा ट्रैक्टर चालित बीज एकत्रीकरण यंत्र के द्वारा एकत्र किया जा सकता है।

फसल संरक्षण –

- ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया एवं ग्वार में पत्तों पर लाल, भूरे रंग के धब्बे दिखाई दें तो डायथेनम एम–45 का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

प ुपालन –

चारे का संरक्षण –

- वर्षा ऋतु में यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता के कारण पशुओं को चारा प्राप्त होता है और इस समय आवश्यकता से अधिक चारा उपलब्ध रहता है इस चारे का सही रूप में संरक्षण करें और भविष्य में आने वाली चारे की कमी से बचें।

चारा बैंक –

- वर्षा के जल का सही एवं स्वस्थ संरक्षण बनाये रखें। अतिरिक्त चारे को चारा बैंक के रूप में एकत्र कर सामुदायिक व्यवस्था के तहत बड़े स्तर पर भी पशुओं को खिलाया जा सकता है।

———————

अक्टूबर :

फसलोत्पादन :

गेहूं, जई एवं जौ –

- गेहूं, जई, जौ एवं रबी में बोयी जाने वाली दलहन एवं तिलहनी फसलों के लिये खेत तैयार करने के लिए खरीफ फसलों से खाली करें।
- यदि खेत तैयार हो गया हो तथा तापमान कम हो तो द्वितीय पखवाड़े में गेहूं की बुवाई की जा सकती है।

बरसीम –

- बरसीम की बुवाई के लिये खेत तैयार कर पानी की उपलब्धता होने पर बुवाई करें।

मूंगफली –

- समय से बोयी गयी मूंगफली में सिंचाई कर पर्याप्त नमी बनाएं रखें।
- अगेती बोई गई मूंगफली की खुदाई कर रबी फसलों के लिये खेत तैयार करें।

चना, मटर, मसूर –

- अक्टूबर के अंत में तैयार खेतों में चना, मटर, मसूर आदि की बुवाई करें। बुवाई हल के पीछे कूड़ों में या कतारों में करें।

धान –

- धान के खेत में पर्याप्त नमी बनाएं रखें।
- धान उगाने वाले क्षेत्रों में खड़ी धान की फसल में चारे के लिये बरसीम तथा तेल पैदा करने वाली फसलों में सरसों के बीज का छिड़काव किया जा सकता है जिससे धान की कटाई के साथ–साथ रबी फसल बढ़कर तैयार हो जाती है और 35 से 40 दिन के अंतराल पर प ुओं के लिये बरसीम का पौष्टिक चारा उपलब्ध रहता है।

बहुवर्षीय घास –

- बहुवर्षीय घासों एवं बहुकटाई वाली ज्वार की कटाई करें। कटाई के पश्चात् फसलों को सींचकर 30–40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करें।

रबी की फसल –

- रबी की फसलों की बुवाई का उत्तम समय अक्टूबर से शुरू होता है अतः खरीफ की फसलों की उस प्रकार कटाई करें कि वर्षा की नमी पर खेतों की तैयारी कर लें। जिन किसान भाइयों के पास पानी के साधन उपलब्ध हैं वह जई, बरसीम, रिजका, सेंजी, शलजम, चारे हेतु चाइना कैबिज आदि की बुवाई करें।
- रबी फसलों की बुवाई के लिये विभिन्न साधनों द्वारा भूमि की सतहों में नमी का संरक्षण अवश्य करें और इसके लिये खेत तैयार कर आखिरी जुताई बखर से करें, प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें, खेतों को तैयार करने हेतु खुली नाली बनाने वाले यंत्रों की अपेक्षा रोटावेटर एवं रोटासीडड्रिल का बुवाई के लिये प्रयोग करना चाहिए।

मुख्य एवं सहफसल –

- सम्पूर्ण उत्तर भारत में गन्ना और आलू पंक्तियों में बोए जाते हैं अतः इन फसलों के खाली स्थानों पर बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलों की बुवाई करनी चाहिए।
- इस पद्धति से खेती करने से मुख्य एवं सहफसल दोनों को ही लाभ होता है।

बागवानी :

बेर एवं अनार –

- बेर एवं अनार में कीट एवं रोगों से बचाव तथा आंवला में नमी की कमी हो तो पानी लगाएं।
- नव रोपित पौधों की देख रेख करें ।
- जीवनयापन हेतु 15–15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई करें एवं थालों की गुड़ाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

- नव रोपित पौधों की देखरेख एवं पुराने पौध की आकार देने का कार्य करें।
- घासों की कटाई कर छोटे–छोटे ढेर बनाकर रखें। जब कुछ सूख जाएं तो गज्जी बनाएं। कटे हुए घास में क्रमबद्ध पशु चराई कराएं।

फसल संरक्षण :

बरसीम –

- बुवाई से पूर्व बरसीम के बीज को राइजोबियम कल्चर एवं थीरम (0.25 प्रतिशत) और बेविस्टिन (0.20 प्रतिशत) से उपचारित करें।
- बरसीम के खेत में पानी भरकर बीज का छिड़काव करें।

रिजका (लूसर्न) –

- रिजका (लूसर्न) को पंक्तियों में कम गहराई पर बोएं।

बीजों एकत्रित करना –

- रबी में बोई जाने वाली फसलें की उन्नत एवं रोग रोधी प्रजातियों बरसीम (बुन्देल बरसीम–1, 2 एवं वरदान)। रिजका/लूसर्न (आर.एल–88, आनन्द–2 तथा चेतक) तथा जई (जेएचओ–822, जेएचओ–820 अथवा केन्ट) उन्नत किस्म की प्रजातियां हैं, के बीजों को समुचित मात्रा में एकत्रित करें।

पशुपालन :

- पशुओं के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- पशु घर को साफ रखें। गोबर व मूत्र को दिन में दो बार अवश्य हटाएं।
- समय–समय पर कीटनाशक–जैवनाशक दवाओं का घोल फर्श व दीवारों पर छिड़कना चाहिए।

परजीवी नाशक दवा –

- चूंकि इस समय तक वर्षा लगभग खत्म हो चुकी होती है। अतः पशुओं को अन्तः परजीवी नाशक दवा पशुचिकित्सक की सलाह पर वर्ष में दो बार (छःमाह के अंतराल) देना चाहिए।
- क्योंकि यदि पशु के पेट में कीड़े हैं तो पशु को दिया गया अधिकांश पोषक तत्वों का लाभ पशु को नहीं मिल पाता है तथा पशु की उत्पादकता कम हो जाती है।

सांस की बीमारी –

- इस मौसम में पशुओं को अधिकतर सांस की बीमारी होती है। अतः पशु को खांसी व सर्दी से बचाव का उपाय करना चाहिए।

खुरपका ,मुंहपका रोग –

- इस मौसम में एक अन्य बीमारी मुख्यतः खुरपका, मुंहपका देखने में आती है। जो कि संक्रामक होती है। इसमें मृत्यु नहीं होती परन्तु इससे पशु की कार्य व उत्पादन क्षमता अत्यन्त कम हो जाती है।
- यह रोग पहले खुरों में होता है और चाटने से मुंह में आ जाता है।
- रोग होने पर पशु को तेज बुखार आता है, मुंह व जीभ पर छाले आ जाते हैं, पशु के मुंह से लार बहती है, खुरों की बीच की जगह में भी छाले आ जाते हैं।
- इस बीमारी के फैलने पर, प्रभावित भाग को लाल दवा 1 प्रतिशत से उपचारित करना चाहिए।

रोग से बचाव –

- खुरपका–मुंहपका रोग से बचाव हेतु स्वस्थ पशु को दो बार टीके लगवाने चाहिए। प्रथम टीका अक्टूबर–नवम्बर में तथा बूस्टर टीका प्रथम टीके के एक माह बाद लगवाना चाहिए।

- यह टीका प्रतिवर्ष लगवा लेना चाहिए।

भेड़ों का ऊन –

- अक्टूबर–नवम्बर में भेड़ों का ऊन जरूर काटना चाहिए। यदि सम्भव हो तो यह कार्य अक्टूबर के प्रारम्भ में कर लेना चाहिए। तथा दूसरी बार मार्च–अप्रैल में काटना चाहिए।

———————

नवम्बर :

फसलोत्पादन :

गेहूं –

- गेहूं की बुवाई पूर्ण कर लें। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इस समय बोने के लिए 100 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर के दर से प्रयोग करें।
- बीज को 2 ग्राम कैप्टान अथवा 2.5 ग्राम थीरम प्रति हेक्टेयर की दर से उपचारित करके बुवाई के समय 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। शेष नत्रजन की मात्रा बुवाई के 40–45 दिन बाद डालें।
- अगर खेत में जस्ते की कमी हो तो बुवाई के समय 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।
- अक्टूबर के द्वितीय पखवाड़े में बोए गए गेहूं में 20–25 दिन की अवस्था में 5–6 सेमी. गहरी पहली सिंचाई करें।
- बुवाई कतारों में हल के पीछे या कूड़ों में या फर्टीसीडड्रिल से करें। समय से बोए गए गेहूं में 20–25 दिन पर 5–6 सेमी की पहली सिंचाई करें।

जौ, जई –

- जौ, जई आदि की बुवाई भी उपर्युक्तानुसार पूर्ण करें।

ज्वार –

- यदि ज्वार की कटाई नहीं की गई हो तो शीघ्र ही कर लें।

शलजम –

- सितम्बर में यदि भालजम आदि की फसल चारे के लिये बोई गई हो तो कटाई पूर्ण करलें।

बरसीम, रिजका, सेंजी एवं जई –

- बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलों की बुवाई खेत के एक कोने में न करके रबी मुख्य फसलों गेहूं, जौ, चना, मटर आदि की पंक्तियों के मध्य में करें क्योंकि चारा फसलें अन्न वाली फसलों से प्रतिस्पर्धा नहीं रखती। अतः इस प्रक्रिया से पौष्टिक चारा प्राप्त होता ही है साथ ही भूमि की भौतिक दशा में सुधार के साथ–साथ उर्वराशक्ति में भी बढ़ोतरी दर्ज होती है।
- चारा फसलों में मुख्यरूप से बरसीम, रिजका, के साथ 10 प्रतिशत सरसों के बीज को मिश्रित कर बोना चाहिए।

बहुवर्षीय घास –

- बहुवर्षीय घासों की कटाई करें। इसके बाद यह सुशुप्तावस्था में चली जाती है। जिससे अगली कटाई तापमान बढ़ने पर फरवरी–मार्च में ही प्राप्त होती है।
- वर्षा ऋतु में रोपित पौध की देखरेख करते रहें। थालों में हल्की पानी देकर गुड़ाई करें।
- खेतों में यदि 8 से 10 मी. की दूरी की घासों की पुरानी जड़ें जो सड़गल कर काले रंग की हो जाती हैं उन्हें श्रमिकों अथवा ऑफबारिंग ट्रैक्टर चालित मशीन अथवा कल्टीवेटर से कटाई करते रहना चाहिए जिससे नई जड़ों एवं घासों के किल्लों को निकलने में आसानी होती है।

बागवानी :

आंवला –

- आंवले में 15 नवम्बर के बाद तुड़ाई आरंभ करें।

अमरूद –

- अमरूद में भी दो तीन दिन के अंतराल पर तुड़ाई आरंभ करें।

बेर –

- बेर में चूर्णिल आसिता से बचाने हेतु गंधक युक्त दवा का 1.0 प्रतिशत छिड़काव करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह :

हरा चारा –

- पुराने पौध/वृक्ष से प्रजातियों के आधार पर आवश्यकतानुसार कृत्तन या कटाई–छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- नए पौध की देखरेख करें।
- खेतों की मेढ़ों पर लगे सुबबूल, ढैंचा, नीम, खेजडी, भीमल तथा अन्य काटने एवं छांटने योग्य वृक्षों की जहां स्थापना की गई है इन वृक्षों की कटाई एवं छंटाई करते रहना चाहिए जिससे पशुओं हेतु चारा, घरों में उपयोग हेतु ईंधन तथा यथा आवश्यकता फल, फूल और गोंद आदि प्राप्त होता है।

सूखी घास –

- सूखी घास को खूब मजबूत बांधकर कठोर बंडल बनाकर रखें। जिसे चारे की कमी के समय पशु को दें। पुराने घासों के मैदान में या कटे घास के मैदान में क्रमबद्ध चराई कराएं।

फसल संरक्षण :

जई –

- जई के बीज को ट्राइकोडर्मा 5 ग्रा./कि.ग्रा. से उपचारित कर बुवाई करें।

बरसीम एवं रिजका –

- बरसीम एवं रिजका की फसलों की सिचाई करें।
- बहुकटाई वाली फसलों की कटाई समय पर करें।
- खेत में खड़ी फसलों में आवश्यकतानुसार खरपतवार नियंत्रण करें।

पशुपालन :

पशुओं में सर्दी का प्रकोप कम करने के लिए उन्हें 30 ग्राम हल्दी 250 ग्राम गुड़ में मिलाकर देना चाहिए। खांसी कम करने के लिए तारपीन के तेल का बफारा दिया जा सकता है।

- छोटे पशुओं खासतौर से भेड़ व बकरियों में जो कि मुख्यतः चराई पर आधारित हों उन्हें फॉस्फोरस (डाई कैल्शियम फॉस्फेट) की 10–15 ग्राम मात्रा प्रतिदिन देनी चाहिए। अथवा डाई कैल्शियम फॉस्फेट की 1–2 कि.ग्रा. मात्रा को एक कुन्तल दाने में मिलाकर खिलाना चाहिए।

दिसम्बर :

फसलोत्पादन :

गेहूं –

- यदि गेहूं की बुवाई शेष हो तो बुवाई पूर्ण कर लें। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- इस समय बोने के लिए 125 कि.ग्रा. गेहूं के बीज प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। बीज को 2 ग्राम कैप्टान या 2.5 ग्राम थीरम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करके बोयें।
- बुवाई के समय 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। शेष आधी मात्रा बुवाई के 40–45 दिन बाद डालें। अगर खेत में जस्ते की कमी हो तो बुवाई के समय 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट का प्रयोग करे।
- समय से बोये गए गेहूं तथा जई में 20–25 दिन की अवस्था पर 5–6 सेमी की पहली सिंचाई करें। तथा दूसरी सिंचाई 40–45 दिन पर कल्ले निकलने की अवस्था पर करें।

मसूर –

- इस माह में मसूर की बुवाई करने के लिए 55–75 कि.ग्रा. बीज का प्रयोग करें।
- बुवाई कतारों में हल के पीछे या कूड़ों में या फर्टीसीडड्रिल से करें।

- बुवाई के 45–60 दिन के बीच पहली सिंचाई करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद मसूर में गुड़ाई करें।

चना –

- चने में बुवाई के 45–60 के बीच पहली सिंचाई करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद चना में गुड़ाई करें।

राई,सरसों –

- राई–सरसों में 55–65 दिन पर फूल निकलने के पहले दूसरी सिंचाई अवश्य करें।
- चारा फसलों के साथ 10 प्रतिशत भाग पर सरसों के बीज जो मिश्रित कर बोया गया था उसकी कटाई आवश्यक रूप से करनी चाहिए अन्यथा सरसों की अधिक बढ़वार चारा फसलों की पैदावार को घटा देती है।

जौ एवं मटर –

- जौ एवं मटर में पहली सिंचाई बुवाई के 30–35 दिन पर करें।
- बुवाई के 30–35 दिन बाद मटर में गुड़ाई करें।

मक्का –

- रबी मक्का की फसल में बुवाई के 20–25 दिन की अवस्था पर निराई–गुड़ाई करके सिंचाई कर दें तथा समुचित नमी के लिये समय समय पर सिंचाई करते रहें।
- मक्का की फसल के 30–35 दिन की अवस्था पर (पौधों के लगभग घुटने तक की ऊंचाई) 40 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से पहली बार छिड़काव करें एवं दूसरा छिड़काव मंजीर निकलने के पूर्व करनी चाहिए।

बरसीम –

- बरसीम में आवश्यकतानुसार 14–18 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।
- बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलें बढ़वार लेकर कटाई योग्य हो जाती हैं।
- बलुई–दोमट भूमि में नत्रजन की शेष 40 कि.ग्रा. मात्रा का दूसरी सिंचाई के बाद छिड़काव करें।
- कटाई : बुवाई के 50–55 दिन बाद बरसीम एवं 55–60 दिन बाद जई की चारे के लिये कटाई करें। इसके पश्चात् बरसीम की कटाई 25–30 दिन के अंतराल पर करते रहें।

बागवानी :

- नए रोपित पौध को घास–फूस से ढक कर पाले से बचाएं। धुआं या सिंचाई करके भी पाले से बचा सकते हैं।
- आंवले–अमरूद की तुड़ाई कर विपणन करें।
- बेर, को गिलहरी और पक्षियों से बचाएं।

चरागाह एवं वन चरागाह :

- पुराने स्थापित चारा वृक्ष से प्रजाति के अनुसार 20–30 प्रतिशत कटाई–छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- नए रोपित चारा वृक्ष की देखरेख करें।
- सूखे घास के बंडल को पशु चारा के रूप में प्रयोग करें।
- प्राकृतिक चरागाह में क्रमबद्ध चराई कराएं।

फसल संरक्षण :

गेहूं –

- गेहूं में गेहूं के मामा की रोकथाम के लिये 2.0 कि.ग्रा. आइसोप्रोटूरान (75 प्रतिशत) 500 लीटर पानी में घोलकर अथवा सल्फोसल्फयूरान 25 ग्राम सक्रिय तत्व 250–300 लीटर पानी में घोल कर पहली सिंचाई के बाद परन्तु 30 दिन की अवस्था के पहले छिड़काव करें।
- सल्फोसल्फयूरान के छिड़काव से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार एवं गेहूं का मामा का नियंत्रण हो जाता है।

- यदि गेहूं के मामा का कम अनुपात तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार का अनुपात ज्यादा हो तो 625 ग्राम 2,4–डी सोडियम साल्ट (80प्रतिशत डब्ल्यू सी) का 500–600 लीटर पानी में छिड़काव 30–35 दिन की अवस्था पर करें।
- गेहूं में बलुई–दोमट भूमि के लिये 40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर एवं भारी भूमि में 60 कि. ग्रा. की दर से पहली सिंचाई के बाद छिड़काव करें।

जौ –

- जौ में भी उक्त खरपतवार नियंत्रण समग्र रूप से कार्य करती है।

जई –

- जई में 20–25 दिन की अवस्था पर 20 कि.ग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

बरसीम –

- बरसीम की फसल में यदि तना विगलन रोग के लक्षण दिखें तो बहुकटाई वाली फसलों की कटाई समय पर करें।

पाले से फसल का बचाव –

- शरद ऋतु के कारण वातावरण का तापमान काफी कम हो जाता है अतः सभी प्रकार की फसलों को पाले से बचाना चाहिए।
- विशेष रूप से मुलायम फसलें शीघ्र एवं अधिक मात्रा में प्रभावित होती हैं अतः फसलों में पानी लगाना चाहिए।
- जिस दिन पाला गिरने की आशंका हो उस दिन खेतों के आसपास धुआं कर देना चाहिए।

पशुपालन :

- यदि इस समय वातावरण में बादल नहीं हैं और पशुओं को खिलाने के अतिरिक्त चारा बचा हुआ है तो उसे छाया में सुखाना चाहिए और गर्मी के मौसम के लिये एकत्र कर रख लेना चाहिए।
- दिसम्बर की चटकीली धूप में सुबबूल, ढेंचा, नीम, खेजड़ी, भीमल तथा अन्य काटने एवं छांटने योग्य वृक्षों की छंटाई के बाद पत्तियां एवं डंठल आदि को छाया में सुखाकर 'हे' बनाकर रख लेना चाहिए तथा गर्मी के मौसम में जब कम चारा उपलब्ध रहता है उस समय पशुओं को खिलाना चाहिए।

पशुधन विकास एवं ग्रामीण उन्नति का नया मार्ग : कृत्रिम गर्भाधान

मनीष कुमार अवस्थी[1], सुधीर कुमार रावत[2], विकास कुमार एवं सरजू नारायन[3]

भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि और पशुपालन एक दूसरे के पूरक है, भारत में कृषि जनित आय, सम्पूर्ण सकल घरेलु आय का एक बड़ा हिस्सा हैं जिसमें पशुपालन से अर्जित आय का हिस्सा एक चौथाई से अधिक है। विश्व में दुग्ध उत्पादन में हम, प्रथम स्थान पर है लेकिन प्रति पशु उत्पादकता बहुत कम है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि सम्पूर्ण विश्व के 20 प्रतिशत पशु होने पर भी प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता 240 ग्राम है जो कि मानक से कम है। इस अन्तर का मुख्य कारण हमारी प्रजनन प्रणाली, पोषण प्रबन्धन तथा रखरखाव संबंधी वैज्ञानिक तकनीकी ज्ञान का अभाव होना है, भारत में जहाँ प्रचुर मात्रा में कृषि संसाधन उपलब्ध है,दुग्ध उत्पादन बढ़ाने की अपार सम्भावनायें है जिसके लिये आवश्यकता है प्रजनन की प्राकृतिक तरीकों को छोड़कर नई वैज्ञानिक तकनीक कृत्रिम गर्भाधान को अपनाने की, जो कि पशुपालकों को शिक्षित और जागरूक करके ही सम्भव है।

नर पशु का वीर्य कृत्रिम ढंग से एकत्रित कर मादा की जननेन्द्रियों में कृत्रिम रूप से यंत्र की सहायता से पहुॅचाना ही कृत्रिम गर्भाधान कहलाता है। पशुपालन व्यवसाय में कृत्रिम गर्भाधान एक क्रान्तिकारी अनुसंधान है। कृत्रिम गर्भाधान का मुख्य उद्देशीय शीघ्रता से पशु सुधार करना, जिससे अधिक से अधिक दुग्ध उत्पादन प्राप्त किया जा सकें । हमारे देश मे अच्छे सांड़ की संख्या सीमित है और जो है भी वो उच्च गुणवत्तायुक्त नहीं हैं। जिससे न दुग्ध उत्पादन अच्छा रहता है और न ही कृषि कार्य हेतु अच्छे बैल पैदा होते हैं। कृत्रिम गर्भाधान की पद्धति प्रजनन कार्यो की एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा पशुओं के सुधार की दिशा में अपेक्षाकृत शीघ्र परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। भारत में अच्छी नस्ल के सांड़ों की सीमित संख्या है यदि ये सांड़ प्राकृतिक रूप से सम्भोग करते हैं तो एक वर्ष में 80–100 बच्चे ही पैदा कर सकते हैं और इस विधि से उसी एक सांड़ से उतने ही समय मे लगभग 1500–2000 बच्चे पैदा कर सकते हैं। इस विधि द्वारा सांड़ों की कमी की समस्या का समाधान निश्चित है। सांड़ के द्वारा गर्भित करवाने के लिये किसान को कम से कम एक सांड अवश्य रखना पड़ेगा जिस पर रख रखाव, पोषण पर अधिक खर्च होता है। यदि सांड मे कोई चोट लग जाये या कोई और परेशानी हो तो वह प्रजनन नहीं कर पायेगा। जब कि कृत्रिम गर्भाधान में ऐसी कोई परेशानी नहीं होती है इसमें कम खर्च में ही प्रजनन हो जाता हैं। आज के समय में किसान के लिये सांड़ खरीदना बहुत महंगा है और सांड़ का परिवहन तो बहुत महंगा पड़ेगा लेकिन एकत्रित वीर्य को आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जा सकता है। मनवांछित गुणों वाला वीर्य देश–विदेश कहीं से भी मंगाया जा सकता है। कृत्रिम गर्भाधान मे जो वीर्य प्रयोग किया जाता है वह पूरी तरह परीक्षित शुद्ध होता है तथा जिस भी सांड़ से एकत्रित किया जाता है उसका पूरा अभिलेख रखा जाता है इसलिये कोई भी जननेन्दिय रोग पशु को होने की सम्भावना नगण्य होती है। जब कि यदि हम सांड़ का प्रयोग करते है तो इसका कोई भी अभिलेख नहीं होता है। यह भी नहीं पता होता है कि सांड़ को कौन–कौन से रोग हैं जो उस मादा में पहुॅच जाते हैं। इससे सांड़ की प्रजनन शक्ति का भी पता नहीं चल पाता है जबकि कृत्रिम गर्भाधान द्वारा परीक्षित वीर्य से प्रजनन शक्ति की परीक्षा हो जाती है तथा इच्छित गुणों से युक्त मनवांछित संतति प्राप्त की जा सकती हैं

कृत्रिम गर्भाधान के पूर्ण सफल न होने के कई कारण है, जिनमे मुख्य कारण गर्भाधान केन्द्रों पर होने वाली असुविधा है। इसके अतिरिक्त मनुष्यों में इस तकनीक के प्रति अविश्वास, धार्मिक कुरीतियों, अशिक्षा तथा पशु चिकित्सकों का कार्य के प्रति लगाव आदि अन्य कारण भी इसकी सफलता में बाधक है। कृत्रिम गर्भाधान में प्रजनन की सफलता के लिये निम्न बातों का ध्यान रखना चाहियेः–

---

[1]ए.बी.सी.,रायबरेली [2]के.वी.के., [1]एवीसी रायबरेली [2]के.वी.के.महोबा [3]बी.एन.पी.जी.,हमीरपुर

1– **ऋतु काल की जॉचः**

भारत मे विकसित राष्ट्रों की अपेक्षा कृत्रिम गर्भाधान से प्राप्त गर्भधारण की दर काफी कम है। जिसका पहला कारण है पशु का ऋतुमयी होने की जॉच न होना। ऋतुकाल की सही पहचान न होने से कृत्रिम गर्भाधान द्वारा गर्भधारण के परिणाम संतोषजनक नहीं होते है। गर्मी के अधिकतर लक्षण रात्रि में ही प्रकट होते है। भैंस की अपेक्षा गाय में गर्मी के तीव्र लक्षण प्रकट होते हैं। जब पशु जोर– जोर से चिल्लाये, चारा न खाये, दूसरे पशुओं पर चढ़े–चाटे, दूसरे पशुओं के चढ़ने पर चुपचाप खड़ी रहे, पशु बेचैन रहे, दुग्ध उत्पादन में कमी, भग से काफी मात्रा में स्वच्छ स्राव का गिरना, भग में सूजन का आना, भग की श्लेषमा का सुर्ख होना तब समझना चाहिये कि पशु पूरी तरह से गर्मी में है। इन लक्षणों को सुबह, शाम और रात्रि में अवश्य जॉच लेना चाहिये। गर्मी की जॉच सांड़ द्वारा भी करवाना चाहिये। प्रायः गर्मी की सही जांच न हो पाने पर पशुओं में गर्भाधान में देरी हो जाती है फलस्वरूप ब्यांत का अन्तराल बढ जाता है। गर्मी की सही पहिचान कृत्रिम गर्भाधान की सफलता की कुंजी है।

2– **गर्भाधान के सही समय की पहिचानः**

गाय एवं भैंस में मद चक्र की अवधि 21 दिन होती है। ऋतुमय का समय गाय में 8–28 घन्टे (औसत 22 घन्टे) भैंस में 10–32 घन्टे (औसत 24 घन्टे) होता है। बेहतर गर्भधारण दर प्राप्त करने हेतु कृत्रिम गर्भाधान गर्मी के मध्य से अन्त की ओर कराया जाना चाहिये। अर्थात यदि पशु सुबह गर्मी में आया तो शाम को तथा यदि शाम को गर्मी में आया तो अगले दिन सुबह गर्भित कराया जाना चाहिये। यदि समय से पहले या बाद में गर्भित कराया जाये तो गर्भ नहीं ठहरता एवं पशु पुनः मद में आ जाता है। हालॉकि मद का आना वर्ष भर पाया जाता है। परन्तु इसका प्रकटीकरण, प्रबन्धन एवं लक्षणें पर भी निर्भर करता है। मद का समय एवं खड़ी गर्मी की अवधि मौसम के हिसाब से परिवर्तित होती रहती हैं। अतः कृत्रिम गर्भाधान प्रायः सुबह 8–10 बजे तक करवाना चाहिये। इसके बाद गर्भित कराया जाये तो गर्भाधारण दर में कमी आ जाती है।

3– **वीर्य की गुणवत्ताः**

उत्तम वीर्य के गुणवत्ता सम्बन्धी लक्षणों को उसके निषेचन क्षमता से धनात्मक सम्बन्ध पाया गया हैं। सांड़ का वीर्य पारदर्शक, एक समान, क्रीम के रंग जैसा सफेद, तरल होता है। अच्छे ताजे वीर्य को देखने पर उसमे समुद्र की भांति लहरे उठती दिखाई पड़ती हैं। एक बार प्रयोग में मात्रा लगभग 10–12 मिलियन ठीक रहती है। असामान्य शुक्राणुओं की संख्या 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिये। इतनी संख्या पशु की उम्र, स्वास्थ्य का स्तर, पूर्व जनन सम्बन्धी गतिविधि ,मौसम एवं वीर्य संग्रहण की विधि पर निर्भर करता है। बहुत अधिक मात्रा में असामान्य शुक्राणु पशु की कम उर्वरता दर्शाते हैं। उत्तम वीर्य चलायमान होना चाहिये। इसकी चलायमानता 40–60 प्रतिशत तक अच्छा माना जाता है। इससे यह पता चलता है कि शुक्राणु मादा जननेन्द्रिय में प्रवेश पाकर अण्डाणु से मिलने के लिये आगे चल सकते हैं अथवा नहीं। यदि चलायमानता कम है तो मृत जीवाणुओं की संख्या अधिक हैं। अतः हमेशा स्वस्थ्य पशु का ही वीर्य एकत्र करना चाहिये। इसका बहुत प्रभाव पडता है। दूसरा इसका संरक्षण कैसे किया गया है कृत्रिम योनि जीवाणु रहित थी कि नहीं, संरक्षण के लिये कन्टेनर में गैस पर्याप्त मात्रा में है या नहीं आदि सब वीर्य की गुणवत्ता पर प्रभाव डालते हैं जिससे गर्भधारण की दर कम हो जाती है।

4– **गर्भाधान हेतु उचित विधिः**

मादा का गर्भित होना उसके ठीक ऋतुमयी होने एवं उचित समय पर, उचित स्थान पर डालने पर निर्भर करता है। कई विधियों द्वारा पशु को गर्भित किया जाता है लेकिन आज कल रेक्टम योनि विधि सबसे ज्यादा वैज्ञानिक एवं अन्य विधियों से अच्छी होने के कारण इसी का प्रयोग किया जा रहा हैं। इसमें बांये हाथ को मादा के गुदा में प्रविश्टि करते हैं हाथ से गर्भाशय की ग्रीवा वाला भाग, तर्जनी, मध्यमा तथा अंगुष्ठ की सहायता से पकड़ते हैं अब दाहिने हाथ से वीर्य वाहक नली योनि के अन्दर धीरे–धीरे प्रवेश करते हैं। इस नली को ग्रीवा के मुख से 2–2.5 से0मी0 तक अन्दर ले जाते हैं फिर पिचकारी को दबाकर वीर्य अन्दर पहुॅचा देते हैं। इस प्रकार गर्भाधान सफल हो जाता है।

5— **अन्य सुझावः**

कृत्रिम गर्भाधान को असफल बनाने के लिये आर्थिक कारणों के अतिरिक्त सामाजिक अन्ध विश्वास का विशेष महत्व है। इसके लिये पशुपालकों में इसके प्रति वि वास बढाना होगा। जिन स्थानो पर पशुओं की पोषण व्यवस्था अच्छी न हो वहां कृत्रिम गर्भाधान का प्रयास प्रायः असफल ही रहता है। गर्भाधान हमेशा प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा ही करवाना चाहिये। प्रयुक्त होने वाला यंत्र हमेशा साफ सुथरे, जंगरहित, जीवाणु रहित होना चाहिये। इससे जननेन्द्रिय रोग की सम्भावना कम होती है। वीर्य सेचन करने से पहले स्ट्रा को सीधे कन्टेनर से निकाल कर प्रयोग नहीं करना चाहिये इसको एक मिनट के लिये गरम पानी में डालकर 37—40 डिग्री सेल्सियस तक तापमान पर तरलीकरण कर लेना चाहिये। पशु को तनावग्रस्त नहीं होना चाहिये। अर्थात पशु का गर्भाधान भाान्त वातावरण में करना चाहिये। कठिनाई से नियंत्रित होने वाले पशुओं को अड़गड़ा में खड़ा करके गर्भित करना चाहिये। पशु के गर्भित होने के बाद पशु को खुला नहीं छोड़ना चाहिये। पशुपालक को गर्भित करवाने की तिथि व अन्य अभिलेख सुरक्षित रखना चाहिये। गर्भाधान के 21 वें दिन पशु यदि गर्मी में नहीं आता तो समझना चाहिये कि गर्भाधान सफल रहा। फिर 3 माह पश्चात पशु का गर्भ परीक्षण करवा लेना चाहिये। फिर पोषण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती हैं।

यदि पशुपालक भाई उपरोक्त बातों का समुचित ध्यान रखकर पशु को गर्भित कराये तो कभी ब्यांत में अन्तराल में वृद्धि नहीं होगी, प्रत्येक वर्ष पशु गर्भित होकर लगातार दूध उत्पादन देता रहेगा। इस प्रकार अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

———————

अपराजिता : एक बहुउद्देशीय दलहनी चारा

अर्चना सिंह तथा सुनील कुमार

चित्र– अपराजिता क्लाईटोरिया टरनेशिया

अपराजिता को अन्य कई नामों से जाना जाता है जैसे तितलीमटर, शंखपुष्पम, कृष्णनील एवं बटर फलाई पी। वानस्पतिक भाषा में इसे क्लाईटोरिया टरनेशिया कहा जाता है। अपराजिता दलहनी कुल का एक बहुवर्षीय शाकीय पौधा है। इसमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण यह अत्यधिक पौष्टिक होता है। इसलिए इसका उपयोग मुख्यतः दलहनी चारे हेतु किया जाता है। इसके अलावा अति पिछड़े व आदिवासी क्षेत्रों में शाक भाजी के रूप में भी किया जाता है। अपराजिता के पुष्प आकर्षक होने के कारण लोकप्रिय है तथा इसे बागवानी तथा पूजा पाठ के भी प्रयोग में लाया जाता है। अपराजिता या शंखपुष्पम् के पौधे के विभिन्न भागों का उपयोग मानव संबंधी अनेक रोगों तथा व्याधियों के उपचार के लिए किया जाता है। अपराजिता की उपयोगिता को देखते हुए राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी मांग बहुत बढ़ गई है जिससे अपराजिता का प्राकृतिक रूप से अत्यधिक दोहन हो रहा है और वर्तमान समय में अपराजिता दुर्लभ पौधों की श्रेणी में आ गई है। इसके संरक्षण हेतु विभिन्न स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। लेकिन खेती करके अपराजिता सुरक्षित व संरक्षित किया जा सकता है।

वानस्पतिक महत्व

अपराजिता मूलतः अमेरिका से लाया गया पौधा है। लेकिन आज यह विश्व के सभी उष्णकटिबंधीय एशियन देशों, उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका केरीबियन तथा मेडागास्कर में पाया जाता हे। भारत में भी यह उपोष्ण तथा उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में विशेषतः अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से अधिक पाई जाती है लेकिन मानव हस्तक्षेप के कारण इसकी संख्या में बहुत कमी आई है। अपराजिता को लगभग 300 से 600 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है। विश्व में अपराजिता की पचास से भी अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं। बहुवर्षीय शाकीय लता होने के कारण तथा पुष्पों की आकारिकी सेन्ट्रोसेमा विरजीनियानम के समान होने के कारण पहले इसे सेन्ट्रोसेमा समूह का पौधा भी माना जाता था। अपराजिका की टरनेशिया प्रजाति का नाम मोलक्का आर्कीपेलगों में स्थित टरनाटा द्वीप के नाम पर रखा गया है।

अपराजिता की नीली व खेत पुष्पों वाली दो बहुप्रचलित किस्में आसानी से देखने को मिल जाती हैं। आयुर्वेद में खेत पुश्पों वाले पौधों को नीले पुष्पों वाले पौधों से अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। जीन प्रथक्करण के कारण पुश्पों में बहुरूपता देखने को मिलती है जहां सफेद तथा नीले रंगों के बीच पाए जाने वाले सभी वर्णकों के पुष्प देखे जा सकते हैं जिसका लाभ बागवानी में किया जा सकता है।

पर्यावरणीय महत्व

अपराजिता शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों के चरागाहों में प्राकृतिक तौर पर उगती हुई देखी जा सकती है जहां उच्च तापक्रम व प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों में अन्य पौधे नमी की कमी से सूख जाते हैं वहीं अपराजिता अपनी अधिक गहरी जड़ों तथा लचीलेपन (प्लास्टीसिटी) की विलक्षण क्षमता के कारण उच्च अनुकूलन की क्षमता रखती है। झांसी तथा इसके आसपास के क्षेत्रों में जहां ग्रीष्म काल में अत्यधिक गर्मी पड़ती है, अपराजिता का पौधा हरा रहता है तथा पशुओं को दलहनी हरा चारा प्रदान करता है।

अपराजिता को विभिन्न प्रकार की मृदा में लगाया जा सकता है वहां का पी.एच.मान मध्यम से उच्च हो। यह नाइट्रोजन स्थरीकरण द्वारा मृदा की उर्वरता को बढ़ाने के साथ ही उसके रसायनिक संगठन को भी सुधारता है। मृदाक्षरण को रोकने के लिए कवर क्राप के रूप में इसका उपयोग किया जा सकता है क्योंकि बुवाई के एक माह में ही अच्छी बढ़वार होने के नाते यह मृदा को पूरी तरह ढक लेती है। मृदा की उपजाऊ भाक्ति को बढ़ाने के लिए अपराजिता

को हरी खाद के रूप में भी प्रयुक्त किया जाता है। दलहनी फसल के रूप में मृदा उपचार व संरक्षण के लिए यह महत्वपूर्ण मानी जतीा है। परोक्ष रूप से अपराजिता का पारिस्थितिकीय संतुलन में अतुलनीय योगदान है।

चारा उपयोगिता

अपराजिता पशुओं के प्रोटीनयुक्त चारे का एक उत्तम स्त्रोत है। हमारे मवेशी भी अपराजिता चारे को अन्य दलहनी चारे की अपेक्षा अधिक प्राथमिकता देते हैं क्योंकि यह स्वादिष्ट, सुपाच्य व नरम होता है। अपराजिता उच्च कोटि का चारा मूल्य दर्शाती है क्योंकि इसमें प्रोटीन की मात्रा लगभग 20–30 प्रतिशत रेशा–32 से 48 प्रतिशत, एडीएफ–32–34 प्रतिशत तथा एनडीएफ लगभग 40 से 62 प्रतिशत होता है जबकि इसकी पाचन क्षमता लगभग 80 प्रतिशत आंकी गई है। अपराजिता पशुओं की खाद्य क्षमता को भी बढ़ाता है। अपराजिता का प्रयोग एकल अथवा घास या अन्य चारे के साथ मिलाकर भी खिलाया जा सकता है। अपराजिता के पौधों की कुट्टी करके या सम्पूर्ण पौधे को ही भेड़ों व बकरियों के आगे डाल दिया जाता है जिसमें से वे पहले नरम पत्तियों व भााखाओं को तथा उसके बाद शेष भाग को भी खाते हैं। अपराजिता आधारित चरागाहों में छोटे बड़े मवेशियों को चरने के लिए छोड़ा जा सकता है लेकिन चराई के दौरान नियमित रूप से प्रोटीन की मात्रा मवेशियों को मिलती रहे इसके लिए विशेष तौर पर घूर्णन चराई की व्यवस्था करनी चाहिए। इसके लिए चरागाहों का उचित प्रबंधन एवं उसमें उपस्थिति वानस्पतिक घटकों का भी मूल्यांकन करना चाहिए। क्योंकि ये सभी वनस्पतियां प ाुओं के स्वास्थ्य तथा उनसे प्राप्त होने वाले उत्पादों पर प्रभाव डालती हैं। अपराजिता की एकल फसल की हर कटाई के बाद शीघ्रता से बढ़ती है। कम लागत और कम समय में अच्छी बढ़वार वाली इस दलहनी फसल को ट्रॅापिकल अल्फा –अल्फा की संज्ञा भी दी जाती है क्योंकि इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। जैसे– कटाई व कुट्टी करके, चरागाह विधि में, भूसा बनाकर अथवा साइलेज के रूप में। अपराजिता को किसी भी घास झाड़ी अथवा वृक्षों के साथ लगाया जा सकता है, किन्तु इस अति उपयोगी चारे की अब तक कोई भी चयनित अथवा विकसित किस्म उपलब्ध नहीं है।

अपराजिता के अन्य उपयोग

1.बागवानी में :

अपराजिता के नीले तथा भवेत आकर्शक पुष्पों को बाग–बगीचों में सुंदरता की दृष्टि से लगाया जाता है। दक्षिण भारत में शंखपुष्पम् नाम से जाना जाने वाला यह पुश्प धार्मिक कार्यों में विशेषकर शिव आराधना के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

2.खाद्य पदार्थों में :

भारत के केरल प्रदेश तथा फीलीपीन में अपराजिता की हरी पत्तियों तथा फलियों का प्रयोग भााक–सब्जी के रूप में भोजन के लिए होता है। अन्य स्थानों पर इसे आपातकालीन खाद्यान्न के तौर पर प्रयोग में लाया जाता है जबकि अन्य अनाज व खाद्य सामग्री अनुपलब्ध होती है तब अपराजिता के बीजों को दाल के रूप में हरी पत्तियों व फलियों को सब्जी के रूप में तथा हरी फलियों में से दानों को निकालकर भूना या उबाला जाता है जिससे वह स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव नहीं डाता है।

पेय पदार्थों में :

अपराजिता के फूलों से नीले रंग का एक पेय तैयार किया जाता है जिसे थाईलैंड के निवासी स्वास्थ्य पेय भी कहते हैं। वहां के आदिवासी नीले पुश्पों से खाद्य रंजक भी बनाते है। जो ज्यादा स्थाई होता है। उत्तरी थाईलैंड के पहाड़ी आदिवासी लोगों की जीविका का मुख्य स्रोत अपराजिका के शुष्क नीले पुष्पों का व्यवसाय है। जिसमें एण्टीआक्सीडेंट की प्रचुर मात्रा तथा नेत्र लाभ संबंधी विशेष गुणकारी होता है।

औषधीय प्रयोग : अपराजिता के पौधे के विभिन्न भागों का उपयोग विभिन्न बीमारियों व रोगों के उपचार में विभिन्न देशों किया जाता है।

(अ) भारत :

औषधि की दृष्टि से श्वेत पुष्पों वाले किस्म को नीले पौधे की किस्म से श्रेष्ठ माना गया है। यह आयुर्वेदिक औषधि शंखपुष्पी का अभिन्न संघटक भी है। सफेद पुष्प वाले पौधे की नरम भाखाओं को प्रसूता के कमर के चारों ओर बांधने से प्रसव आसानी से हो जाता है। जड़ों की राख का प्रयोग चेहरे की त्वचा को निरोगी व कांतिमय बनाने के लिए किया जाता है। जड़ों के सत्व का प्रयोग नाक के अंदर करने से माइग्रेन तथा फोड़ों को ठीक किया जा सकता है। पत्तियों के सत्व को एक सप्ताह तक दिन में दो बार लेने से स्केबीज तथा बुखार ठीक हो जाता है। हमारे देश की परपम्रागत आयुर्वेदिक औषधि में इसको मस्तिष्क स्फूर्ति प्रदान करने वाली दवा, स्मरण तथा मेधा ाक्ति बढ़ाने वाली औशधियों का निर्माण किया जाता है। नीले पौधों की जड़ों का काढ़ा बनाकर पुराना दमा तथा उल्टी दस्त इत्यादि को ठीक किया जा सकता है। बीजों को जलाकर उसका धुंआ भवांस द्वारा लेने से अस्थमा, हिचकी, गले तथा आंख की संक्रामक बीमारियों को ठीक किया जा सकता है। इसकी जड़ों का प्रयोग गठिया तथा कर्ण रोगों के उपचार में होता है। **नोट :** आयुर्वेदिक औषधीय प्रयोग के पूर्व कृपया आयुर्वेदाचार्य से सलाह अवश्य लें।

(ब) अमेरिका :

एक–एक मुट्ठी अपराजिता के पुश्प व जड़ों के चूर्ण को एक अच्छी अंगूरी मदिरा में मिलाकर एक प्रकार का प्रभावी काढ़ा जिसे अंग्रेजी में मेडीकामेन्ट मैग्नीफीको बनाया जाता है। इस काढ़े का एक प्याला नियमित पीने से क्लोरोसिस (रक्त की कमी या एनीमिया) की बीमारी में बहुत आराम मिलता है। इसक अतिरिक्त यह काढ़ा यकृत एवं आंत संबंधी बीमारियों, प्रजनन संबंधी व्याधियों को दूर करने में प्रयुक्त होती है। अपराजिता के बीजों में कृमिनाशक, मूत्र संबंधी, विषदंश तथा प्रशीतक गुण पाए जाते हैं।

(स) फीलीपीन :

फीलीपीन के परम्परागत औषधियों में अपराजिता के उपयोगी जड़, तनों, पत्तियों, पुष्पों व बीजों के लिए नीले पुष्पों वाली किस्म को लगाया जाता है। पत्तियों का लेप जोड़ों के सूजन में किया जाता है। गर्म पत्तियों के सत्व को नमक के साथ मिलाकर कर्णशूल उपचार के लिए कानों के चारों ओर लगाया जाता है। बीजों में आरामदेह, शुद्धिकरण व कृमि नाशक गुण होते हैं।

अपराजिता के रसायनिक गुण

वैज्ञानिकों ने अपराजिता के पौधों में मुख्यतः एसीटाइलकोलीन, स्मरण शक्ति, कृमिनाशक, जर्मनाशक, सी.एन.एस प्रभाव, कोशिकीय विशाक्तता, फंफूदीनाशक, लार्वानाशक, हाइपोग्लाइसेमिक, एन्टीहिस्टामिन्टीक, घावनाशक, अस्थमानाशक तथा मधुमेह नाशक प्रभाव सिद्ध किये हैं।

कीट प्रतिरोधक प्रोटीन

अपराजिता के पौधे में बहुत से रोगों के रोगप्रतिरोधक क्षमता युक्त एक रक्षात्मक प्रोटीन फीनोटीन निर्माण के लिए उत्तरदायी जीन एनालॉग भी पाया जाता है सिके द्वारा न केवल रसायनिक दृष्टि से बल्कि आनुवंशिक रूप से भी अन्य पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित की जा सकती है जो कीटों के लिए अतिविषैला व फफूंदीरोधक होता है।

अपराजिता का संरक्षण

अपराजिता में सन्निहित पादप रसायनिक गुणों के कारण सीधे जंगलों से ही अपराजिता के पौधों का दोहन व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। अपराजिता पादप समूहों की संख्या में लगातार होती कमी को देखते हुए इसके संरक्षण हेतु अमेरिकी कृशि विभाग ने ठोस कदम उठाए हैं जिससे अपराजिता अंतर्राश्ट्रीय प्राकृतिक संपदा संरक्षण संघ (आई.यू.सी.एन) द्वारा भामिल दुर्लभ पौधों की सूची में से संकटाग्रस्त पौधों की सूची में न पहुंचे। खराब अंकुरण, कठिन परिस्थितियों, अधिक चराई व अन्य कारणों से नवोदित अंकुर तथा पौधों की मृत्यु तक हो जाती है। अतः जैव तकनीकी के परखनली विधि से भी अपराजिता के संरक्षण हेतु विश्व स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं।

———

केन्द्रीय बजट 2013–14: कृषि, पशुओं तथा चारे के लिये बहुत कुछ

डी.आर. पलसानिया, सुनील कुमार, एस.के.रॉय एवं ए.के.रॉय

केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री पी. चिदम्बरम द्वारा 28 फरवरी, 2013 को पेश किये गये बजट 2013–14 में कृषि क्षेत्र, विशेषतया पशुओं तथा चारे के लिये बहुत कुछ है। वर्ष 2013–14 में कृषि क्षेत्र के लिये रुपये 27,049 करोड़ का प्रावधान है जोकि वर्ष 2012–13 में निर्धारित राशि से लगभग 22 प्रतिशत ज्यादा है। इस राशि का लगभग 12.6 प्रतिशत (रु.3415 करोड़) कृषि अनुसंधान के लिये निर्धारित किया गया है।

राष्ट्रीय पशु मिशन

भारत एक कृषि प्रधान देश है, परन्तु वास्तव में कृषि की असली जान पशु हैं। कृषि का भारतीय सकल घरेलू उत्पाद में वर्ष 2010–11 में 14.5 प्रतिशत योगदान था जिसका एक–तिहाई (30 प्रतिशत) पशु क्षेत्र से आता था और पशु क्षेत्र का यह योगदान आने वाले वर्षों में तेजी से बढ़ेगा। अठारहवीं पशु गणना (2007) के अनुसार भारत में कुल 52.97 करोड़ पशु हैं, जो कि विश्व के कुल पशुओं का लगभग 20 प्रतिशत हैं। भारत संख्या के आधार पर विश्व की क्रमशः 16 प्रतिशत गायें तथा 55 प्रतिशत भैंसें रखते हुये प्रथम स्थान पर हैं। बकरियों की संख्या में भारत का दूसरा (22 प्रतिशत) तथा भेड़ों की संख्या में चौथा (5 प्रतिशत) स्थान हैं। इसी तरह 2010–11 के नवीनतम आँकड़ों के अनुसार 12.18 करोड़ टन उत्पादन के साथ भारत दुनिया का सर्वाधिक दुग्ध उत्पादक देश है। पशु करोड़ों की संख्या में लोगों को रोजगार प्रदान करने के अलावा जीवांश खाद, परिवहन, पॉवर, ईंधन, मांस, ऊन, चमड़ा आदि उपलब्ध कराकर अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। हाल ही के वर्षों में लोगों की खान–पान की आदतों में तेजी से बदलाव आ रहा है तथा पशु आधारित भोजन की माँग लगातार बढ़ रही है। अतः आने वाले वर्षों में पशु क्षेत्र का महत्व और अधिक बढ़ने वाला है।

इतना अधिक महत्व होने के बावजूद आज जब हम भारत के पशुधन की उत्पादकता की बात करते हैं तो वह विश्व में न्यूनतम है। जब हम भारतीय पशुधन की कम उत्पादकता के कारणों का विश्लेशण करते हैं तो पशुओं के लिये अच्छी गुणवत्ता वाले चारे की पर्याप्त मात्रा में वर्ष पर्यन्त उपलब्धता न होना एक बड़े कारण के रूप में उभर कर सामने आती है। वर्तमान में देश में 63 प्रतिशत हरे चारे की, 23 प्रतिशत सूखे चारे की तथा 64 प्रतिशत खल की कमी है, जो कि आने वाले समय में बढ़ती ही जायेगी। अतः इस खाई को कम करने के लिये न केवल हमें हमारे पारम्परिक चारे के स्रोतों पर ध्यान देना होगा बल्कि अन्य विकल्पों पर भी अमल करने की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय बागवानी मिशन तथा राष्ट्रीय बॉस मिशन की तर्ज पर देश में पहली बार राष्ट्रीय पशु मिशन की प्रस्तावना बजट 2013–14 में की गई है। चूंकि इस पर अभी सभी राज्यों की सहमति नहीं मिली है फिर भी इस मिशन के लिये बजट 2013–14 में 307 करोड़ रुपयों का प्रावधान किया गया है। राष्ट्रीय पशु मिशन में पौष्टिक चारे एवं खलियों द्वारा जानवरों के उचित पोषण पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिये खलियों तथा चारें पर उप–मिशन बनाया जायेगा। इसमें बंजर भूमि व वनों से चारा उत्पादन, द्वि–उद्देश्यीय चारा फसलों, चारा फसलों के बीज उत्पादन व वितरण, चारा प्रसंस्करण, चारा उत्पादन, प्रबन्धन व प्रसंस्करण से सम्बन्धित मशीनरी हे व साइलेज यूनिट्स तथा मानव संसाधन विकास पर विशष प्रावधान प्रस्तावित है। अन्य उप–मिशनों में पूर्वोत्तर भारत में सूअर (पिगरी) विकास, पशु विकास तथा क्षमता व तकनीकी विकास व प्रसार शामिल है।

वर्तमान में भारत की कुल कृषि योग्य भूमि का लगभग 4 प्रतिशत क्षेत्र चारा फसलों के अन्तर्गत है। चारा फसलें हरे चारे का मुख्य स्रोत हैं। कृष्य चारा फसलों के अन्तर्गत और अधिक क्षेत्रफल के विस्तार की सम्भावना नहीं है। अतः हमें उपलब्ध सीमित क्षेत्र से विविधीकरण तथा सघनीकरण द्वारा इनकी उत्पादकता बढ़ाने पर जोर देना होगा। भारत में जानवरों के लिये आव यक कुल चारे की लगभग 50–60 प्रति ात फसल अवशेषों से पूर्ति होती है। हरित क्रान्ति के दौरान तथा बाद में देश में मुख्य फसलों की बौनी किस्मों के अन्तर्गत क्षेत्रफल काफी बढ़ गया है। बौनी किस्मों में दाना : चारा अनुपात ज्यादा होता है। फलस्वरूप प्रति इकाई क्षेत्र से चारा कम प्राप्त हो रहा है। अतः आज हमें हमारी परम्परागत किस्मों को भी हमारे फसल

तन्त्र में कुछ हद तक भाामिल रखने की आवश्यकता है। साथ ही कुछ फसलों जैसे कि ज्वार, बाजरा, मक्का आदि की द्वि–उद्देश्यीय प्रजातियाँ विकसित करने की आवश्ययकता है ताकि अनाज के साथ–साथ पर्याप्त मात्रा में चारा भी मिल सके। उपरोक्त के अलावा हमें फसल अवशेषों को जलाने की कुप्रथा को भी रोकना होगा। सामूहिक सम्पत्ति संसाधन, जिन्हें ''कॉमन प्रोपर्टी रिसोर्स'' (सी.पी.आर.) कहते हैं, भी भारत में चारे (चराई) के मुख्य स्रोत हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से देश कि कुल चरित भूमि के अन्तर्गत क्षेत्रफल लगातार घटा है। कुल चरित भूमि के अन्तर्गत वर्श 1950–51 में 66.9 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल था जो कि वर्श 2005–06 में घटकर मात्र 37.42 मिलियन हेक्टेयर रह गया है। इस घटते हुये चरित क्षेत्र की अति–चराई के कारण उत्पादकता 1 टन/हे0 से कम हो गयी है, जो कि चिन्ता का विषय है। ऐसी स्थिति में हमें अपनी क्षीण भूमियों व सामूहिक सम्पत्ति संसाधनों के सुधार तथा उनका वैज्ञानिक तरीके से उपयोग करने की जरूरत है। विभिन्न प्रकार के वैकल्पिक भूमि प्रयोग पद्धति में उचित पेड़, घास तथा फसल (यदि सम्भव हो तो) लगाकर उसका बेहतर प्रयोग किया जा सकता है तथा ईंधन, चारा व खाद्यान्न का उत्पादन भी किया जा सकता है। वन चरागाह ऐसी ही एक उत्तम तकनीक है जो न केवल क्षीण भूमि की दशा में सुधार करती हैं बल्कि उनका उचित उपयोग करके उत्पादन भी बढाती हैं।

भारत में चारा उत्पादन में क्षेत्रीय व मौसमी दोनों ही प्रकार के असंतुलन विद्यमान हैं। सामान्यतः वर्शा ऋतु में चारा आवश्कता से ज्यादा जबकि ग्रीष्म ऋतु में चारे की कमी रहती है। चूंकि चारे का लम्बी दूरी तक परिवहन आर्थिक रूप से लाभप्रद नहीं होता है। अतः चारे को सुखाकर, दबाकर (डेन्सीफिकेशन) व गांठे (बेल्स) बनाकर उनकों कम लागत में कमी वाले क्षेत्रों में भेजा जा सकता है। इसी तरह मौसमी असंतुलन को कम करने के लिये चारे का हे व साइलेज द्वारा परिरक्षण व संग्रहण किया जा सकता है तथा कमी के समय में काम में लिया जा सकता है।

फसल विविधिकरण

देश के हरित क्रान्ति वाले क्षेत्रों (पंजाब, हरियाणा,प. उत्तर प्रदेश आदि) में कई प्रकार की कृषि समस्याएं उत्पन्न हो गई है। भूमिगत जल स्तर लगातार गिर रहा है तथा मृदा स्वास्थ्य तेजी से बिगड़ रहा है। फलस्वरूप कृषि उत्पादकता में ठहराव सा आ गया है। इन क्षेत्रों में उपरोक्त समस्याओं को दूर करने के लिये 500 करोड़ रुपये का प्रावधान करते हुये फसल विविधिकरण कार्यक्रम शुरु किया जायेगा। इसमें धान की फसल को मक्का, कपास, सब्जियों तथा फलों द्वारा विस्थापित किया जायेगा। किसानों को प्रोत्साहन देकर उपरोक्त फसलों को अपने फसल चक्र में अपनाने के लिये राजी किया जायेगा।

पूर्वी भारत में हरित क्रान्ति

पूर्वी भारत विशेषतया असम, बिहार, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ व पश्चिमी बंगाल में पैदावार बढ़ाकर हरित क्रान्ति लाने के लिये 1000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। पिछले बजटों में इस प्रकार के प्रावधानों के उत्साहजनक परिणाम मिले हैं।

न्यूट्रि फार्मस

हमारे देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग कुपोषण का शिकार है। देश के कुछ जिलों में यह समस्या ज्यादा है। अतः इन जिलों में लोगों को संतुलित भोजन उपलब्ध कराने के लिये 200 करोड़ रुपये के प्रावधान के साथ एक न्यूट्रि फार्मस पायलेट प्रोजेक्ट चलाया जायेगा। इसके अन्तर्गत खाद्यान्न फसलों की बायोफोरटीफाइड़ किस्मों जैसे कि आयरन–फोर्टीफाइड बाजरा, जिंक–फोर्टीफाइड गेहूं , प्रोटीन फोर्टीफाइड़ मक्का तथा विटामिन–ए फोर्टीफाइड चावल आदि को किसानों को उपलब्ध कराया जायेगा जिससे कि उन्हें संतुलित आहार मिल सके।

किसान उत्पादन संगठन

विभिन्न किसान जोकि एक विशेष कृषि उत्पाद पैदा करते है, वे उसका अच्छा उत्पादन, प्रोसेसिंग, मूल्य संवर्धन तथा विपणन करने के लिये किसान उत्पादक संगठन बनाकर पंजीकृत करवा सकते है। इस प्रकार के पंजीकृत संगठन को सरकार 10 लाख तक की मेचिंग ग्रान्ट देगी। इससे संगठन को बैंकों से ऋण लेने में भी आसानी रहेगी। लघु किसान कृषि व्यवसाय निगम के अन्तर्गत भी किसानों को क्रेडिट के लिए 100 करोड़ रुपये का फंड बनाया गया है।

अन्य प्रावधान

जल समेट कार्यक्रमों की सफलता को देखते हुये समेकित जलसमेट कार्यक्रम के अन्तर्गत फंड को 3050 करोड़ रुपये (2012–13) से बढ़ाकर 5387 करोड़ रुपये (2013–14) कर दिया गया है। केरल में नारियल बागानों के पुनरुत्थान के लिये 75 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना तथा राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अन्तर्गत क्रमशः 9954 तथा 2250 करोड़ रुपये 2013–14 के लिये प्रस्तावित है। कृषि में ऋण की उपलब्धता बढ़ाने के लिये 7,00,000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया है जोकि वर्ष 2012–13 में 5,75,000 करोड़ रुपये था। कृशि में फ्रन्टीयट क्षेत्रों में अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिये रॉची में भारतीय कृषि जैव–प्रौद्योगिकी संस्थान तथा रायपुर में नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ बायोटिक स्ट्रेस मैनेजमेन्ट स्थापित किये जायेंगे।

इस प्रकार हम देखें तो केन्द्रीय बजट 2013–14 में कृषि क्षेत्र के लिये बहुत कुछ है। पहली बार जानवरों तथा चारे पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। इस बजट में यदि वर्षा आधारित कृषि, बारानी खेती, कृषि का मशीनीकरण, मत्स्य पालन आदि पर भी कुछ प्रावधान होते तो बजट और अधिक अच्छा हो सकता था। चूंकि बारानी खेती देश के कृषि योग्य क्षेत्र के लगभग 60 प्रतिशत भू–भाग में की जाती है तथा इसका अर्थव्यवस्था में बहुत योगदान है। इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

———

पौध संरक्षण में प्रयोग होने वाले यंत्र व उनका उपयोग

प्रदीप सक्सेना, पी. के. त्यागी, एन.के.शाह, आर.बी.भास्कर, मुजीब आजमी व शाहिद अहमद

फसलों में कीट व्याधियों के उचित नियंत्रण के लिए प्रयोग होने वाले यंत्रों को विभिन्न परजीवीनाशकों के संरूपण/उपलब्ध शक्तियों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है जिससे की परजीवीनाशकों का उपयुक्त छिड़काव तकनीकी रूप से किया जा सके व आर्थिक हानि को रोका जा सके। इन यत्रों का प्रयोग कर पर्यावरण को भी सुरक्षित रखा जा सकता है। प्रायः यत्रों का वर्गीकरण निम्न प्रकार करते हैं।

(अ.) पानी की परजीवीनाशकों **शक्ति से चलने वाले यंत्र**

मानव चालित यंत्र : यह निम्न प्रकार के होते हैं।

(क.) हाइड्रोलिक यंत्र –(पम्प प्रणाली पर कार्य करने वाले यंत्र)

i. सिरिंज स्लाइड पम्प
Ii. बकेट पम्प (स्टिरर पम्प)
iii. नेपसेक – लीवर वाला पम्प
– पिस्टन वाला पम्प
iv. हस्त चालित कम्प्रेशर यंत्र
v . पैर चालित गटोर यंत्र

(ख.) शक्ति चालित यंत्र

i. अधिक दबाव वाला (हाथ से उठाने व ट्राली पर रखने वाला)
Ii. ट्रैक्टर पर रखकर चलने वाला
iii. .अधिक दबाव वाला नेपसेक
iv. हवाई जहाज द्वारा छिड़काव करने वाला यंत्र

(ग.) मिस्ट स्प्रेयिंग (छिड़काव)

i. फिलट गन (ऐयर एटोमाइजर)

(ब.)गैस की शक्ति से चलने वाले यंत्र

मानव चालित यंत्र– यह निम्न प्रकार के होते हैं।

(क.) हाइड्रोलिक यंत्र (पम्प प्रणाली पर कार्य करने वाले यंत्र)

i. हाथ से पकड़कर चलाने वाला यंत्र
Ii. स्ट्रेचर यंत्र
iii. ट्रेक्शन यंत्र
iv. बूम यंत्र
iv. सेल्फ प्ररोपेल्ड यंत्र

(ख.) शक्ति चालित यंत्र

i. नेपसेक, मोटर से चलने वाला यंत्र
Ii. हाथ से उठाने वाला
iii. ट्रैक्टर पर रखकर चलने वाला यंत्र
iv. वीड कन्ट्रोल यंत्र

(ग.) कम दाब एवं कम आयतन वाले छिड़काव यंत्र (अमिकेन्द्रिय शक्ति से चलने वाले यंत्र)

i. हाथ से पकड़कर बैटरी चलित अल्ट्रालोवाल्यूम यंत्र
Ii. ट्रैक्टर पर रखकर चलने वाला अल्ट्रालोवाल्यूम यंत्र
iii. वायुयान की सहायता से चलने वाला अल्ट्रालोवाल्यूम यंत्र
iv. नेपसेक, मोटर से चलने वाला यंत्र

(स.) बुरकाव वाले यंत्र (डस्टर)

क.मानव चालित यंत्र

i. पेकेज डस्टर यंत्र
Ii. प्लन्जर डस्टर यंत्र
iii. बेलो डस्टर यंत्र
iv. रोटरी डस्टर यंत्र
v. कंधे पर लटकाने वाला यंत्र
vi. पेट के सामने लटकाने वाला यंत्र

(ख.) शक्ति चालित यंत्र

i. नेपसेक,मोटर से चलने वाला यंत्र
Ii. हाथ/स्ट्रेचर पर रखकर चलने वाला यंत्र
iii. ट्रैक्टर पर रखकर चलने यंत्र
iv. वायुयान द्वारा चालित यंत्र

(द.) फॉग (एयरोसॉल) जेनेरेटिंग यंत्र

i. फॉग बालोअर
Ii. धुआं उत्पन्न करने वाला यंत्र
iii. एक्जास्ट फॉग जेनेरेटिंग यंत्र
iv. स्टीम एयरोसाल जेनेरेटिंग यंत्र
vi. लिक्विफाइल गैस एयरोसॉल

(ध.) दानेदार दवा निस्तारक यंत्र (ग्रेन्यूल एरलीकेटर)

i. छिड़काव वाले डिब्बे
Ii. नेपसेक, रोटरी प्रकार वाले एवं मोटर से चलने वाले
iii. ट्रैक्टर पर रखकर
iv. वायुयान चालित

(न.) ध्रुमक यंत्र (फ्यूमीगेटर)

i. सामानोगैस फुट पम्प
Ii. सायॅल इन्डक्टर

विभिन्न पेड़ों/झाड़ियों तथा फसलों पर उपयुक्त छिड़काव के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले घोल के आयतन की मात्रा को **सारिणी–1** में द ाया गया है।

घोल की मात्रा	घोल की मात्रा लीटर/ हेक्टर (पेड़ों/झाड़ियों पर)	फसलों पर
1. अत्यन्त कम मात्रा	250	60
2. कम मात्रा	25–600	60–250
3. मध्यम मात्रा	600–1200	250–700
4. अधिक मात्रा	1200 से अधिक	700 से अधिक

उपलब्ध परजीवीनाशियों के कणों के आकार के आधार पर घोल को प्रयोग के लिए उपकरणों की जानकारी **सारिणी–2** में दी गयी है।

छिड़काव का प्रकार	प्रयोग किए जाने वाला उपकरण	घोल के निकलने वाले कणों का आकार माईक्रान
मोटा छिड़काव	हाइड्रॉलिक स्प्रेयर	400 से ज्यादा
महीन छिड़काव	हाइड्रॉलिक स्प्रेयर, स्प्रे ब्लोअर	100 से 400 तक

	तथा मिस्ट ब्लोअर	
मिस्ट	मिस्ट ब्लोअर तथा एयरोसॉल जेनेरेटर	50 से 100 तक
फॉग	एयरोसॉल जेनेरेटर	0.1 से 50 तक
धुआं	स्मोक जेनेरेटर	0.001 से 0.1
वाष्प	वेपोराइजर	0.001 से कम

रसायनों के भिन्न प्रकार (द्रव/घुलनशील/दानेदार आदि) के कारण निम्न बातों की जानकारी आवश्यक है।

- धुएं के रूप में छिड़काव के लिए मिस्ट स्प्रेयिंग/फागिंग।
- घोल के ठंडे रूप में होने पर घोल को बहुत ही महीन छिद्र वाले नोजल के द्वारा निकाला जाता है।
- घोल के गर्म होने पर घोल को ताप के ऊपर से गुजारा जाता है जिससे वह वाष्प के रूप में बाहर निकलता है।
- गाढ़े घोल या पेस्ट के रूप में स्लरी/वेट उपचार करते हैं।
- अतिसूक्ष्म कणों के लिए आटोमाइंजिंग प्रयोग होता है।
- सामान्य छिड़काव के लिए स्प्रेयिंग करते हैं।
- भूमि को उपचारित करने के लिए ड्रेंन्चिंग या ड्रिप प्रयोग करते हैं।
- फुहारे के लिए स्प्रिकंलिग की जाती है।
- डुबाने के लिए डिपिंग प्रयोग करते हैं।
- पुताई हेतु ब्रशिंग प्रयोग की जाती है।

परजीवीनाशियों (पेस्टिसाइड) के प्रयोग में बरती जाने वाली सावधानियां

कीटनाशियों का प्रयोग करते समय कुछ सावधानियों को ध्यान में रखकर उससे होने वाले दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है।

1. खुला कीटनाशी नहीं खरीदें।
2. खाने के सामान से दूर रखें।
3. कीटनाशी का प्रयोग करने से पूर्व उस पर लिखे दिशा निर्देशों का पालन करें।
4. सही मापक यत्रों का प्रयोग करें। नंगे हाथों से नहीं निकालें।
5. बतायी गयी दवा की मात्रा का ही प्रयोग करें।
6. छिड़काव वाले यंत्र सही अवस्था में हो। उसमें रिसाव नहीं होना चाहिए।
7. वर्षा के समय छिड़काव नहीं करें।
8. शरीर पर पूरे कपड़े पहनें।
9. हवा के विपरीत छिड़काव नहीं करें।
10. छिड़काव वाले यंत्रों को अच्छी प्रकार धोकर रखें।
11. नोजल के बंद होने पर मुंह से साफ नहीं करें।
12. बचे हुए कीटनाशी को गड्ढा खोदकर दबा दें। पेंकिग को भी दबा देना चाहिए।
13. हाथों में दस्ताने पहनकर ही कीटनाशी का प्रयोग करें।
14. छिड़काव के बाद साबुन से हाथ मुंह धोयें व नहायें।
15. बच्चों व जानवरों को दूर रखें।

———

पौष्टिक चारे हेतु दशरथ घास

दिनेश चन्द्र जोशी एवं तेजवीर सिंह

चित्रः दशरथ घास(डेसमेन्थस)

प्रचुर मात्रा में प्रोटीन की उपलब्धता होने के कारण दलहनी चारा फसलें पशुधन उत्पादन की एक अति महत्वपूर्ण इकाई है। यहां तक की व्यावसायिक डेयरी उत्पादन में भी जहां हरी घासें व अन्य चारा फसलें जैसे कि हाइब्रिड नेपियर बाजरा तथा ज्वार मुख्य पशु आहार के रूप में उपयोग में लायी जाती है, पशु के उत्तम स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए दलहनी चारा फसलों को आहार के मुख्य अंश के रूप में उपयोग में लाया जाता है। प्रचुर मात्रा मे प्रोटीन के अलावा दलहनी चारा फसलें खनिज तत्वों जैसे की कैल्शियम और फॉस्फोरस की मात्रा में भी चारा घासों से अग्रणी होती है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार संसार में विभिन्न चारा घासों और दलहनी फसलों की क्रमशः 620 और 650 प्रजातियां पायी जाती हैं परन्तु इनमें से केवल 40 घासों और 30 दलहनी फसलों को ही उचित रूप में चारे हेतु उपयोग में लाया जाता है। विगत कुछ दशकों में दशरथ घास (डेसमेन्थस) एक महत्वपूर्ण और पौष्टिक दलहनी चारे के रूप में उभरी है। इसकी पौष्टिकता को ध्यान मं रखते हुए आस्ट्रेलिया तथा अमेरिका जैसे देशों में इसकी कई उन्नतशील प्रजातियां विकसित की जा चुकी हैं। भारत में डेसमेन्थस का आगमन सर्वप्रथम सन् 1976 में थाईलैंड से हुआ था तब से लेकर विभिन्न शोध कार्यों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि यह शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के किसानों के लिये जो कि आजीविका के लिए दुग्ध उत्पादन पर निर्भर हैं, एक अति महत्वपूर्ण दलहनी चारा फसल है।

दशरथ घास को हैज लूसर्न तथा बौना कोआ के नाम से भी जाना जाता है। वानस्पतिक संरचना में यह सुबबूल से मिलती जुलती है। यद्यपि सुबबूल एक अत्यन्त पौष्टिक चारा वृक्ष है परन्तु इसकी पत्तियों में माइमोसिन नामक रसायनिक पदार्थ होने तथा कठिन बीज उत्पादन होने के कारण चारा उत्पादन हेतु इसका उपयोग कम हो गया है। दशरथ घास इन सभी कारकों से मुक्त होने के कारण एक महत्वपूर्ण दलहनी चारा फसल है।

वानस्पतिक विवरण

दशरथ घास (डेसमेन्थस विरगेटस) एक बहुवर्षीय दलहनी चारा फसल है। यह एक छोटी झाड़ी के रूप में उगने वाली 2 से 3 मीटर तक लम्बी चारा फसल है जिसकी वृद्धि दो प्रकार से होती है सीधे (इरेक्ट) और फेलकर (स्प्रेडिंग)। इसकी पत्तियों की लम्बाई सामान्यतः 3से 8 सेमी तक होती है तथा फूल सफेद रंग के और गोलाकार होते हैं। फलियां सुनहरे भूरे रंग की लगभग 5–8 सेमी तक लम्बी होती हैं। जिनमें सामान्यतः 20–30 बीज पाये जाते हैं। दशरथ घास वानस्पतिक जगत के माइमोसियेसी परिवार का सदस्य है। इसकी उत्पत्ति उष्ण कटिबंधीय अमेरिका में हुयी है। यहां से यह बड़े पैमाने पर मध्य व दक्षिण अमेरिका भर में, मैक्सिको, इंडोनेशिया और अफ्रीका में वितरित हुआ है। भारत में इसका आगमन सर्वप्रथम 1976 में थाईलैंड से हुआ।

जलवायु और भूमि

दशरथ घास विस्तृत श्रृंखला के तापमान और वर्षा वाले क्षेत्रों में उगायी जा सकने वाली महत्वपूर्ण दलहनी चारा फसल है। सामान्यतः यह क्षारीय तथा दोमट मिट्टी के प्रति अनुकूलित है परन्तु सुबबूल की तुलना में यह अम्लीय और कम उर्वरा शक्ति वाली मिट्टी में भी उगायी जा सकती है। यह एक अत्यन्त ही सूखा रोधी चारा फसल है तथा अत्यधिक ठंड व पाला पड़ने वाले क्षेत्रों में भी आसानी से जीवित रह सकती है और वर्ष भर चारा प्राप्त करा सकती है।

स्थापना एवं प्रबंधन

सामान्यतः दशरथ घास की बुवाई ग्रीष्म ऋतु में मानसून के आगमन पर की जाती है। दशरथ घास की स्थापना बीज की बुवाई के द्वारा की जाती है। इसका बीज अत्यन्त कठोर होता है। अतः बुवाई से पहले बीज को 4 से 10 सेकेन्ड तक उबलते हुए पानी में रखना आवश्यक है जिससे कि बीज की सुषुप्त अवस्था खत्म हो जाए और 50 से 70 प्रति ात तक अंकुरण प्राप्त किया जा सके। यह ध्यान रखने योग्य बात है कि उबलते हुए पानी में बीज को अधिक देर तक रखने से भ्रूण की मृत्यु हो जाती है जिसके फलस्वरूप बीज अंकुरित नहीं होता है। सामान्यतः प्रति हेक्टेयर में 2 किलोग्राम बीज की बुवाई नम भूमि में 0.5 से 2.0 सेन्टीमीटर तक की गहराई में की जाती है। अत्यधिक गहराई में बुवाई करने से बीज का अंकुरण बाधित हो सकता है। सामान्यतः इसकी बुवाई पंक्ति में की जाती है तथा कतार से कतार की दूरी 30 से 50 सेमी रखी जाती है और जब इसकी बुवाई घास के साथ की जाती है तो कतार से कतार की दूरी लगभग 80 से 100 सेमी. तक रखी जाती है। इस घास की सफल स्थापना प्रथम वर्श में किये गये चराई प्रबंधन पर निर्भर करती है।

उर्वरक प्रबंधन

बुवाई के समय गोबर की खाद के साथ 15 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 20 किलोग्राम के$_{20}$/हेक्टेयर मिट्टी के साथ मिश्रित कर लेना चाहिए। शोध के द्वारा यह ज्ञात हुआ कि 50 किलोग्राम/हेक्टेयर की दर से फॉस्फोरस का उपयोग करने से हरा चारा उत्पादन में वृद्धि होती है। उचित उत्पादन के लिए 0.2 प्रतिशत सल्फर का उपयोग भी आवश्यक है। शोध द्वारा यह भी ज्ञात हुआ है कि फॉस्फोरस का उपयोग 50 किग्रा/हेक्टेयर से अधिक बढ़ाने पर शुष्क पदार्थ के उत्पादन में कमी आती है।

पोषक तत्व

अन्य दलहनी चारा फसलों की तरह दशरथ घास में भी प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। जिस कारण यह अन्य चारा फसलों के साथ प्रोटीन के पूरक के रूप में उपयोग में लायी जाती है। इसकी पत्तियों में प्रोटीन की मात्रा लगभग 22 प्रतिशत तथा तने में लगभग 15 प्रतिशत होती है। यद्यपि सुबबूल की तुलना में इसमें प्रोटीन की मात्रा कम होती है परन्तु इसमें हानिकारक तत्व माइमोसिन नहीं पाया जाता है अतः पशुओं को दशरथ घास खिलाने से उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर नहीं पड़ता है। **सारिणी–1** में दशरथ घास में पाये जाने वाले विभिन्न पोषक तत्वों का विवरण दिया गया है।

सारिणी–1 दशरथ घास में पाये जाने वाले विभिन्न पोषक तत्व।

क्रमांक	पोषक तत्व	मात्रा
1.	शुष्क पदार्थ	35.2 प्रतिशत
2.	कूड प्रोटीन	पत्ती (22 प्रतिशत), तना, 15 प्रतिशत
3.	कूड रेशा	34 प्रतिशत
4.	एन.डी.एफ.	46.7 प्रतिशत
5.	ए.डी.एफ.	37.0 प्रतिशत
6.	लिगनिन	13.2 प्रतिशत
7.	कैल्शियम	16.5 (ग्राम/कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ)
8.	फॉस्फोरस	3.3 (ग्राम/कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ)
9.	पोटैशियम	19.9 (ग्राम/कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ)
10.	सोड़ियम	0.8 (ग्राम/कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ)
11.	मैग्नीशियम	8.5 (ग्राम/कि.ग्रा. शुष्क पदार्थ)
12.	पाचकीय कार्बनिक पदार्थ	61.2 प्रतिशत
13.	पाचकीय ऊर्जा	58.2 प्रतिशत
14.	नाइट्रोजन	44 प्रतिशत

चारा उत्पादन

यह एक बहुवर्षीय तथा बहुकटाई का सहन करने वाली तथा कटनोपरान्त शीघ्र पुनः वृद्धि वाली दलहनी चारा फसल है। साधारणतः इससे 30–50 टन/हेक्टेयर/प्रतिवर्ष हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन यदि उर्वरक उचित मात्रा में दिये जाये तो इस घास से

50–70 टन/ हेक्टेयर हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। इसका उपयोग मुख्य रूप से चराई के लिये तथा काटकर हरे चारे के रूप में भी करते हैं। वर्ष भर में लगभग इसकी चार से छः बार कटाई की जा सकती है। प्रायः सूखा ग्रस्त रहने वाले क्षेत्रों के लिये दशरथ घास एक उपयुक्त चारा फसल है जो कि ऐसे क्षेत्रों में निरंतर 14 वर्षों तक हरा चारा उपलब्ध करा सकती है। चारा प्राप्ति के अलावा, इसकी अत्यधिक नाइट्रोजन+ स्थिरीकरण की क्षमता के कारण यह कृषि के लिये यह एक आदर्श चारा फसल है।

बीज उत्पादन

सामान्यतः केवल बी उत्पादन के लिये दशरथ घास को क्षारीय मिट्टी में उगाया जाता है। यदि मिट्टी में अम्लता अधिक होती है तो उसे चूना मिलाकर उसकी अम्लता को कम किया जा सकता है। सामान्यतः प्रति हेक्टेयर में लगभग 400–500 किलोग्राम बीज उत्पादन किया जा सकता है। परन्तु फलियों के अनियमित पकाव तथा झड़ों के कारण बीज उत्पादन में गिरावट आ सकती है। अतः अधिक बीज उत्पादन के लिए तीन से चार दिन के नियमित अंतराल पर बीज उत्पादन करना चाहिए अत्यधिक पाला, कम वर्षा तथा अत्यधिक चराई भी बीज उत्पादन में गिरावट लाती है।

&&&&&&

संकर नेपियर घास की खेती–सघन नर्सरी विधि द्वारा अधिक जड़युक्त कलियों का शीघ्र उत्पादन

डी. विजय, चन्दन कुमार गुप्ता, दिवाकर बहुखण्डी, डी.आर.मालवीय

चारे के क्षेत्र में संकर नेपियर घास का नाम सर्वविदित है। बाजरा नेपियर संकर घास, नेपियर (पेनिसीटम् परप्यूरियम्) एवं बाजरा (पेनिसीटम् टाइफाइडिस) के संकरण के फलस्वरूप विकसित की गई उच्च चारा उत्पादन देने वाली बहुवर्षीय घास है। एक बार खेत में स्थापित कर देने पर यह 5–6 वर्ष तक हरा चारा देता रहता है। यह घास गन्ने या ज्वार जैसा प्रतीत होता है। इसका तना 2 से 3 मीटर लम्बा, 1.5 से 2.5 सेमी. चौड़ा, पत्तियां 60 से

चित्र – संकर नेपियर घास

90 सेमी. लम्बी व 5–7 सेमी चौड़ी होती हैं। पौधे का आकार विभिन्न प्रजातियों में व विभिन्न जलवायु के अनुसार घट बड़ सकता है व भिन्न हो सकता है। इस घास की जड़े विस्तृत व सघन होने के कारण मृदा के कणों को बांधे रखने में सक्षम होती हैं। इसलिए यह भूमि के कटाव को रोकने में सहायता करती हैं।

आहार पौष्टिकता

संकर नेपियर घास पशुओं के लिए एक पौष्टिक, स्वादिष्ट एवं पाचक चारा है, जो कि दुधारू पशुओं एवं मांस उत्पादन वाले पशुओं के लिए एक सर्वोत्तम खाना है। उचित अवस्था में कटाई करने पर इस घास को हे (शुष्क चारा) एवं साइलेज के रूप में सुरक्षित रखा जा सकता है। जिसे पशु चाव से खाते हैं। शुष्क भार के आधार पर इस घास में 7–8 प्रतिशत प्रोटीन, 34 प्रति ात रेसा, 2.3 प्रतिशत ईथर निष्कर्ष, 45 प्रतिशत नत्रजन रहित निष्कर्ष एवं 16 प्रतिशत राख पाई जाती है।

जलवायु एवं भूमि

इस घास का उत्पादन सम्पूर्ण भारतवर्ष में सभी प्रकार की जलवायु में आसानी से सफलतापूर्वक किया जाता है। इसकी उचित वृद्धि के लिए गर्म एवं नम जलवायु उत्तम होती है। एक बार धरती में स्थापित होने के बाद यह अधिक गर्मी व शुष्क जलवायु भी वहन कर लेता है। इसके विपरीत यह अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जाता है। बशर्तेकि जल निकासी का उचित प्रबंधन हो। यह घास हर प्रकार की भूमि पर उगाई जा सकती है, परन्तु दोमट या बलुई दोमट भूमि जिसमें जल निकासी का प्रबंध हो, इसके सफल उत्पादन के लिए उत्तम होती है। भारत में यह उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, बिहार, असम, बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, गुजरात, केरल, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु के सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों में उगाया जाता है।

प्रजातियां

देश के विभिन्न भागों में जलवायु के आधार पर विभिन्न प्रजातियों की खेती की जाती है। इनमें से भारतीय कृ.अ.सं.,नई दिल्ली द्वारा विकसित प्रजाति पूसा जाइंट, अधिक मुलायम एवं पत्तीदार व शुष्क जलवायु में भी अधिकता से उगाई जाती है। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित प्रजातियों में एन.सी. 21 एक लोकप्रिय व अधिक उत्पादन देने वाली प्रजाति है, जिसमें सर्दियों में भी पर्याप्त चारा मिलता रहता है। भा.चरा एवं चा.अनु.सं. झांसी द्वारा विकसित की गई प्रजातियों में आई.जी.एफ.आर.आई. 3, 6, 7 व 10 शीघ्र बढ़ने वाली पत्तीदार एवं मुलायम होती हैं। जिन्हें अन्य फसलों के साथ भी उगाया जा सकता है। ये प्रजातियां अम्लीय मृदा एवं

अर्द्धशुष्क जलवायु में उगाने के लिए भी उपयुक्त हैं। इसके अलावा धारवाड़ में विकसित प्रजातियां सम्पूर्ण (डीएचएन–6), केरल में विकसित सुप्रिया, सुगुना, तमिलनाडु की सीओ–1, सीओ–2, सीओ–3, केकेएम–1, महाराष्ट्र की यशवंत (आरबीएन–9) व आंध्र प्रदेश में विकसित एपीबीएन–1 प्रजातियां भी उगाई जात हैं।

जड़युक्त कल्लों का उत्पादन

बाजरा नेपियर संकर घास में बीज का उत्पादन नहीं होता, इसलिए इस घास का पुनरुत्पादन इसकी जड़युक्त किल्लों या कलियों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार से पेड़–पौधों के उत्पादन को कायिक प्रजनन भी कहते हैं।

1.पूर्व–सामान्य विधि द्वारा :

जब इस घास की वृद्धि का उचित समय होता है, उस समय इसकी जड़ों के नजदीक की गांठों से गुच्छों में किल्ले या कलियां निकलती हैं, जिनकी संख्या 10–45 तक होती है। इस घास की वृद्धि का उचित समय सिंचित क्षेत्रों फरवरी मार्च या जून जुलाई व असिंचित क्षेत्रों में जून जुलाई है। जड़ों से 2–3 गांठे छोड़कर तने को काट दिया जाता है, व जड़ों को किल्लों सहित खुदाई करके निकाल दिया जाता है। इन मिट्टीयुक्त गुच्छों से किल्लों को पृथक–पृथक कर दिया जाता है।

2.तने को टुकड़ों में काटकर सघन नर्सरी द्वारा :

एक बार एक बड़े भू भाग में इस घास की खेती करने के लिए बहुत अधिक जड़युक्त किल्लों की आव यकता होती है। एक हेक्टेयर जमीन मं नेपियर संकर घास की खेती करने के लिए लगभग 30 हजार किल्लों की आवश्यकता होती है। अल्प समय में ज्यादा कल्ले प्राप्त करने की आव यकता को देखते हुए भा. च. एवं चा. अनु. सं. झांसी के बीज तकनीकी विभाग में एक तकनीक अपनाई गई। इस विधि में संकर नेपियर के तनों को लगभग 20 सेमी., बराबर टुकड़ों में इस प्रकार कलमनुमा ढंग से काटा जाता है कि हर टुकड़े में कम से कम 2 गांठें जरूर हों। इन टुकड़ों की पहले से तैयार क्यारियों में पंक्तिबद्ध सघन रोपाई की जाती है, जिसमें पंक्तियों की दूरी 4–6 सेमी. व टुकड़ों की एक दूसरे से 3–4 सेमी. की दूरी रखी जाती है। इन गांठ युक्त तने के टुकड़ों की रोपाई इस प्रकार की जाती है कि ये जमीन से लगभग 45 अंश का कोण बनाएं व एक गांठ जमीन के अंदर रहे। क्यारियों में उचित देखभाल एवं पानी देते रहना चाहिए। लगभग 15–20 दिनों में इन तने के टुकड़ों से जड़ें व कलियां निकलनी शुरु हो जाती हैं, जो कि अगले 20–25 दिनों में पूर्ण विकसित कली का रूप ले लेती हैं। आवश्यकतानुसार इन तने के टुकड़ों को उखाड़कर तैयार खेतों में स्थिर रूप से लगा दिया जाता है। एक बार उखाड़ने के बाद इन क्यारियों में पुनः इसी प्रकार तने के टुकड़ों की सघन रोपाई की जाती है व इस प्रकार यह क्रम चलता रहता है। यह विधि किसानों के लिए कई प्रकार से उपयेगी सिद्ध हो सकती है। सामान्य रूप से किल्ले निकालने के उपरान्त पत्तियों को चारे के रूप में प्रयोग कर लिया जाता है व तनों को फेंक दिया जाता है। परन्तु सघन नर्सरी विधि में इन तनों का पूर्ण सदुपयोग हो सकता है, व कम समय में अधिक किल्ले प्राप्त हो जाते हैं। मिट्टी साथ में न होने के कारण तने के टुकड़ों से प्राप्त सघन नर्सरी द्वारा प्राप्त किल्लों का वजन जड़ों से प्राप्त किल्लों के वजन से अपेक्षाकृत कम होता है, अतः गन्तव्य तक ले जाने में परेशानी नहीं होती व असान होता है, सघन नर्सरी पद्धति में सस्ता प्रबंधन जैसे तनों को टुकड़ों में काटने, उनकी रोपाई करने, रोपाई के बाद देखभाल, सिंचाई करने, जड़ व कली आने के बाद उखाड़ने गिनने एवं मिट्टी साथ न होने के कारण वजन हल्का होने से इन्हें वाहन में लादने व ले जाने में सहूलियत होती है। इस विधि मं लागत व मजदूरी भी अपेक्षाकृत कम लगती है।

चित्र–नेपियर घास का सघन नर्सरी विधि द्वारा उत्पादन ।

खेत की तैयारी, खाद एवं उर्वरक

नेपियर संकर घास की खेती करने के लिए खेत को दो तीन बार पलटने वाले हल व हैरो से जुताई की जाती है व अन्तिम जुताई के समय गोबर या कम्पोस्ट खाद (10 से 15 टन प्रति हेक्टेयर) मिलाकर खेत को सममतल कर दिया जाता है। समय समय पर खाद, पानी दें व निराई गुडाई करने हेतु खेत को क्यारियों में बांट दिया जाता है। इसके अलावा खेत में नत्रजन व फॉस्फोरस 40 किग्रा. प्रति हेक्टेयर व पोटाश खाद 30 कि.ग्रा./हेक्टेयर मिला देते हैं। प्रथम कटाई के उपरान्त 30 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिडकाव करने पर पौधों की पुनर्वृद्धि शीघ्र एवं अच्छी होती है।

रोपाई

तैयार जड़युक्त किल्लों/ कलियों की तैयार किये गये खेत में पंक्तिबद्ध ढालदार क्रम में रोपाई की जाती है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 50 सेमी. रखनी चाहिए।

चित्र–नेपियर घास की जड़युक्त कल्लों की रोपाई चित्र– कटाई एवं उपज

सिंचाई एवं निराई गुडाई

पहली बार पौध लगाने के बाद 3–4 बार सिंचाई 10 से 12 दिन के अंतराल में करनी चाहिए गर्मी के मौसम में सिंचाई की आव यकता ज्यादा एवं सर्दियों के मौसम में कम पड़ती है। गर्मियों में सिंचाई 10 से 15 दिन के अंतराल में तथा सर्दियों में 20–25 दिनों के अंतराल में करनी चाहिए। वर्शा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु इसकी जड़ों में जल एकत्रित नहीं होना चाहिए, इसलिए जल निकासी का उचित प्रबंध रखना चाहिए। रोपाई करने के 2 से ढाई महीने तक खरपतवार अधिक उगते हैं, इसलिए वर्षा ऋतु में कतारों के बीच गुड़ाई करने से भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

कटाई प्रबंधन एवं उपज

घास की प्रथम कटाई पौधे रोपने/रोपाई के लगभग ढाई महीने बाद की जाती है। इसके बाद की कटाइयां जैसे गर्मियों में 35 से 45 दिन के अंतराल में व वर्षात में लगभग एक महीने के अंतराल में करना चाहिए। इस घास की कटाई धरती से लगभग 15 सेमी. (तनों की) ऊपर से काटने पर पुनर्वृद्धि शीघ्र होती है। इस प्रकार इस घास की प्रतिवर्ष 3 से 10 कटाइयां की जाती हैं, तथा एक बार पौधे स्थिर होने के बाद 5 से 6 वर्ष तक चारे का प्रचुर उत्पादन होता रहता है। शीतऋतु में इस घास की वृद्धि कम होने के कारण कतारों के मध्य में रिजका, बरसीम, सेंजी व मटर आदि चारे उगाये जा सकते हैं। संकर नेपियर घास का प्रतिवर्श हरा चारा उत्पादन 150 से 200 टन प्रति हेक्टेयर होता है।

———

ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक –चारे एवं अन्य कृषि उत्पादों को सुखाने हेतु लाभकारी संयत्र

संजय कुमार सिंह एवं प्रभाकांत पाठक

ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक (ड्रायर) प्लास्टिक या कांच से ढके ऐसे ढांचे होते हैं जिसमें कम से कम आंशिक रूप से नियंत्रित वातावरण में फसलों एवं उनके उत्पादों को सुखाना सम्भव है एवं इसका आकार कम से कम इतना बड़ा होता है कि इसके अंदर कृषि उत्पाद सुखाने से संबंधित कार्य आसानी से किया जा सकता है। इनमे आमतौर पर तापमान और आर्द्रता का नियंत्रण करते हैं परन्तु प्रकाश का नियंत्रण भी सम्भव है। ग्रीनहाउस शुष्कक ढांचे के ढके होने एवं वातावरण नियंत्रण के कारण कीटों एवं बीमारियों पर नियंत्रण आसान हो जाता है। ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक में नर्सरी की पौध को तैयार करके भी अच्छे मूल्यों पर बेचा जा सकता है। साथ ही साथ फूल, फल व वृक्ष प्रवर्धन से भी अच्छा लाभ कमाया जा सकता है।

ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक की संरचना एवं वातावरण नियंत्रण

ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक के ढांचे को धातु के पाइप से बनाते हैं। जस्तीकृत इस्पात एवं एल्यूमिनियम धातुओं का सामान्य तौर पर उपयोग होता है। इस ढांचे को उपयुक्त पारदर्शी पॉलीथिन जो पराबैगनी किरणों से स्थिरीकृत होती है या कांच की चादर से ढका जा सकता है, जिससे फसलों के सुखाने हेतु समुचित सौर ऊर्जा उपलब्ध हो। आमतौर पर ऐसे शुष्कक जिसका ढांचा धातु का हो, की लागत बिना वातावरण नियंत्रक के लगभग 1000 रु. प्रति वर्गमीटर आती है। वातावरण नियंत्रण के लिए आवश्यक उपकरणों की लागत स्थान और फसल पर आधारित होती है। उदाहरण के लिए जिन स्थानों पर गर्मी का मौसम लम्बा होता है और सर्दी अधिक नहीं पड़ती, वहां ग्रीनहाउस में उष्मन तंत्र की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसी तरह जहां सर्दी अधिक पड़ती है, वहां ग्रीनहाउस में उष्मन तंत्र का उपयोग वांछित है। इन शुष्ककों में सम्वातन की समुचित व्यवस्था भी करनी पड़ती है जो आवश्यक है। यह सम्वातन प्राकृतिक अथवा यांत्रिक हो सकता है, जिससे तापमान तथा आर्द्रता प्रभावित होते हैं।

ग्रीनहाउस की आकृति भिन्न भिन्न प्रकार की हो सकती है लेकिन ज्यादातर गेबल, लीनटू तथा कोनसेट आकृतियों का उपयोग होता है। जब शुष्कक बड़े क्षेत्रों में बनाने हों तो बहुविस्तारीय आकृतियों का उपयोग करते हैं।

लोगों के अंदर यह आम धारणा है कि ग्रीनहाउस शुष्कक का निर्माण साधारण किसानों के लिए मुश्किल है। यह निराधार है, इसकी वजह तथ्यों की जानकारी न होना एवं बड़े–बड़े ग्रीनहाउसों जैसे कांच से बने भारी संरचना वाले ग्रीनहाउस का मानसिक अवलोकन या देखकर विचलित हो जाना है। आवश्यकतानुसार ग्रीनहाउस सरल से लेकर जटिल हो सकता है एवं इसका निर्माण स्वयं द्वारा स्थानीय कारीगरों की मदद से सम्भव है। वैज्ञानिकों की मदद् से तकनीकी जानकारी एवं आवश्यक सामग्री जुटाकर इसका निर्माण सीानीय स्तर पर किया जा सकता है।

लौकिक रूढ़ यंत्रों जैसे ताप मापक यंत्र, आर्द्रता मापक यंत्र या अन्य बिजली यंत्रों का प्रयोग करके ग्रीनहाउस पर्यावरण को पूर्ण रूप से नियंत्रित करना निष्फल साबित होता हे। अतः आदर्श रूप में, ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक के अंदर वातावरण सीधे–सीधे संगणक के तहत नियंत्रित होता है। ग्रीनहाउस शुष्कक के वातावरण के कारकों जैसे तापमापक, आर्द्रता, प्रका ा आदि को नियंत्रित करने के लिए संसूचकों के साथ–साथ सूक्ष्म नियंत्रकों का विकास भी हो चुका है। संसूचकों को विशेष रूप से सिलिका डायोड का प्रयोग करके बनाया जाता है। नियंत्रकों के पास इन सभी कारकों को किसी भी परिभाषित जांच दर से ज्ञात करने और भिन्न यंत्रों जैसे पंखा, आर्द्रता जनन तंत्र एवं प्रकाश आदि को नियंत्रित करने की क्षमता होती है। सूक्ष्म नियंत्रकों की उपयोगिता को देखते हुए ग्रीनहाउस शुष्कक में इनका उपयोग लाभकारी सिद्ध होगा।

ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक का विवरण

एक ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक जिसकी विमाएं 3 मी X 5 मी X 2.3 मी है तथा कोनसेट आकार है, का विकास किया जा चुका है। इस सोलर शुष्कक को **चित्र–1** फोटो में दर्शाया गया है। एक अध्ययन के अनुसार मार्च माह में ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक एवं उसके बाह्य वातावरण का तापमान और आर्द्रता में उतार चढ़ाव **चित्र–2** तथा **चित्र–3** में द ार्शाया गया है। इस ग्रीनहाउस टाइप शुष्कक की महत्वपूर्ण तथ्य निम्नवत है।

दिक् स्थिति	:	पूर्व – पश्चिम
शुष्कक फ्रेम	:	38 मिमी. X 38 मिमी. लोहे की पाइप
ग्लेजिंग सामग्री	:	200 माइक्रान एलडीपीई पालीथीन (75 प्रतिशत पारदर्शिता)
प्लेटफार्म	:	सीमेन्ट कंक्रीट, ग्लासवुल से इन्सुलेटेड तथा लोहे की काली पेन्ट की हुई चद्दर से कवर की गई
वायु प्रवेश द्वार	:	5 इंच जालीदार नेट जो दक्षिणी दीवाल पर जमीन से ऊपर बना हो, जिधर से गर्म हवा अंदर आयेगी।

fp=&1 ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक

शुष्कक ट्रे	:	35.0 सेमी X 30.0 सेमी X 5.0 सेमी लकड़ी के ढांचे जिसका आधार जालीदार लोहे से बना है।
शुष्कक ट्रे रखने हेतु रैक		2.0 मी X0.7 मी X1.0 मी ढांचा जो 30.0 मिमी X 30.0 मिमी लोहे के पाइप से बना है तथा इसमें तीन जालीदार रैक हैं।
छायादार जाली	:	शुष्कक की छत के नीचे (अंदर की तरफ) 70 प्रतिशत काली छायादार जाली जो दक्षिण की तरफ खुल सकता है।
बाह्य (चिमनी)		उत्तरी दीवाल में 1.5 मी लम्बा एल आकार का
शुष्कक के अंदर तापमान		गर्मी के मौसम में बाह्य वातावरण की तुलना में 15 डिग्री सेल्सियस अधिक
क्षमता	:	55 किलोग्राम धनिया की पत्तियों के लिए (एक दिन में)
दक्षता	:	95 प्रति ात
पानी उत्सर्जन की दर	:	0.3 कि.ग्रा./वर्गमी/घंटा (मार्च माह में)
बिजली की खपत	:	नगण्य
ढांचे की कीमत	:	रु. 15000/–
लाभ : लागत अनुपात	:	3:1
लागत वापसी का समय	:	3 वर्ष

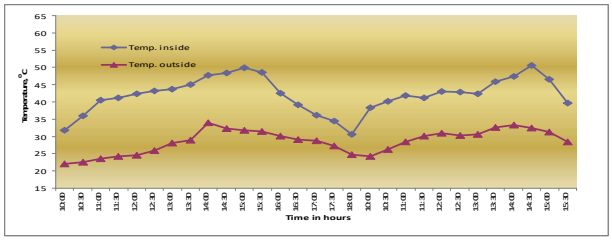

fp=&2 ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक एवं बाह्य वातावरण में तापमान में उतार चढ़ाव (22–23 मार्च)

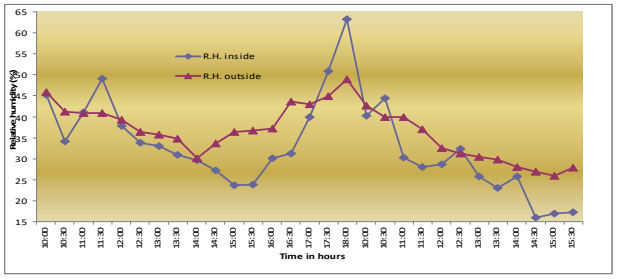

fp=&2 ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक एवं बाह्य वातावरण में आर्द्रता का उतार चढ़ाव (22–23 मार्च)

हरे चारा एवं चारा उत्पादों को संरक्षित करने की सम्भावना

1. हरे चारे को सुखाना

मानसून के समय खरीफ फसलों में एवं रबी में चारा एवं घासें बहुतायत से पाई जाती हैं, जिनका संरक्षण इन दिनों मुश्किल होता है क्योंकि वातावरण में नमी होती है, जो सूखने की दर को कम करती है। किसान भाइयों को इन दिनों में चारा काटकर जानवरों को देना पड़ता है लेकिन बची हुई चारे की मात्रा को संरक्षित नहीं कर पाते हैं। अतः चारे को सुखाकर संरक्षित करने के लिए ग्रीनहाउस टाइप सोलर शुष्कक उपयोगी साबित हो सकता है। इन दिनों पाये जाने वाली मुख्य चारा फसलें निम्न तालिका में प्रदर्शित है। पुष्पन वाली चारे की फसलों की कटाई (50 प्रतिशत पुष्पन पर) करने के उपरान्त सुखाया जा सकता है। सुखाने के लिए इन फसलों को या तो पूरे कटे पौधों को या उनकी कुट्टी काटकर सुखाने से सुखाने की दर में वृद्धि होती है एवं सूखने में लगा समय कम हो जाता है।

हरा चारा	कटाई कब करें	सुखाने की विधि
मानसून फसल (खरीफ)		
1. प्राकृतिक घासें	आव यकतानुसार	पूरे फसल को सुखाया जा सकता है।
2. अंजन घास	60 दिन	कुट्टी काटकर
3. मकई	75–85 दिन	तदैव
4. ज्वार	75–85 दिन	तदैव
5. लोबिया	60 दिन	तदैव
6. ग्वार	60–75 दिन	तदैव
7. बाजरा	60–70 दिन	तदैव
रबी की फसलें		
1. बरसीम	55 दिन (बोने के बाद) 25 दिन (पूर्व कटाई के उपरान्त)	कुट्टी काटकर
2. जई	60 दिन	तदैव
3. रिजका	50–55 दिन (बोने के बाद)	तदैव
4. जौ	65–70 दिन	तदैव

2. फीड पैलेट को सुखाना

बरसात के मौसम में जानवरों को खिलाने के लिए पेड़ पौधों में बहुत सारी पत्तियां आती हैं जोकि यदि समय से काट कर इस्तेमाल कर ली जाए तो पुनः नई पत्तियां आती रहती हैं। इन पत्तियों को सुखाकर गेहूं के भूसे, बारीक ज्वार एवं मक्का की कड़वी इत्यादि में मिलाकर यदि बेलनाकार गोलियां बनाकर एवं सुखाकर रखली जाएं तो ऑफसीजन में जानवरों के खिलाने के उपयोग में लायी जा सकती हैं। बेलनाकार गोलियां बनाने के लिए किसी भी ऊर्जा चालित पशु आहार की गोलियां बनाने की मशीन का उपयोग किया जा सकता है तथा इन गोलियों को

(फीड पैलेट) को ग्रीनहाउस टाइप सोलर शुष्कक में अच्छी तरह सुखाकर बोरों में भरकर रखा जा सकता है। फीड पैलेट को खुले जमीन पर (खासकर बरसात के मौसम में) सुखाने के बजाय ग्रीनहाउस सोलर शुष्कक के अन्दर जालीदार रैक पर सुखाने से सुखाने के समय में कमी तथा अच्छी गुणवत्ता का सूखा हुआ उत्पाद प्राप्त होता है। बरसात एवं ठण्ड के मौसम में ग्रीन हाउस के अन्दर उष्मन तन्त्र का उपयोग करके भी पैलेट एवं अन्य कृषि उत्पादों को सुखाया जा सकता है।

———

ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी

जे.पी.उपाध्याय, सत्यप्रिय एवं पी. शर्मा

वर्तमान समय भारत की जनसंख्या लगभग 123 करोड़ के आस पास है। 2.4 प्रतिशत वार्षिक की दर से बढ़ती इस जनसंख्या की जरूरतें भी उसी तेजी से बढ़ेगी। ऐसे में जहां एक तरफ गरीब–ग्रामीण समुदाय ज्यादातर जरूरतों, जैसे ईंधन, चारा, इमारती लकड़ी, फल दवा एवं भोजन की आपूर्ति हेतु वनों पर निर्भर करती हैं, वहीं दूसरी ओर देश में वन क्षेत्र तेजी से घटते जा रहे हैं।

भारतीय वन सर्वेक्षण विभाग के आंकड़ों के अनुसार आज भारत में मात्र 640.1 लाख हेक्टेयर भूमि ही वास्तव में वनाच्छादित है, जो कुल भू–भाग का 19.52 प्रतिशत है, जबकि राष्ट्रीय वन नीति 1952 के अनुसार सफल भू भाग का कम से कम 33.3 प्रतिशत हिस्सा वनाच्छादित होना चाहिए।

इक्कीसवीं शताब्दी के अंत तक अनुमानित रूप से प्रति वर्ष कम से कम एक करोड़ हेक्टेयर बेकार भूमि को वन्य क्षेत्र के अंतर्गत लाना होगा। ताकि पर्यावरण संतुलन बना रहे। भूमि एक बेहद सीमित साधन है। भारत के भू–उपयोग वर्गीकरण के अनुसार लगभग 72 लाख हेक्टेयर भूमि ऊसर बंजर है जिसका सर्वाधिक क्षेत्रफल लगभग 12 लाख हेक्टेयर अकेले उत्तर प्रदेश में आता है।

इन परिस्थितियों में वन क्षेत्र के विस्तार एवं वनस्पति संबंधी क्षेत्रीय असंतुलन दूर करने के लिए यह नितांत आव यकता है कि नए क्षेत्रों में वन लगाए जाये, जो विशेषकर ऊसर बंजर भूमि पर वृक्षारोपण से सम्भव है। इस प्रकार जहां एक तरफ न सिर्फ देश के वन क्षेत्रों का विस्तार होगा बल्कि बंकार पड़ी उसरीली भूमि का समुचित प्रयोग सम्भव होगा। साथ ही इसमें देश के लगभग 8 करोड़ शिक्षित बेरोजगारों का विकास होगा।

ऊसर बंजर भूमि पर वृक्षारोपण

पूरे भारत वर्ष में ऊसर–बंजर भूमि 72 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में मिला है। जिसका सबसे ज्यादा भाग लगभग (13 लाख हे.) उत्तर प्रदेश में है। इस भूमि के विकास हेतु वानिकी के प्रयोग से न सिर्फ पर्यावरण असंतुलन संबंधी समस्याओं का समाधान होता है बल्कि रोजगार सृजन होने से क्रान्ति के सामाजिक–आर्थिक विकास भी सम्भव होता है।

ऊसर–बंजर भूमि विकास के लिए ऐसी भूमि पर वृक्षारोपण करने के लिए निम्न तकनीकी के विकास हेतु निम्न प्रमुख बातों को ध्यान में रखा गया है। वे इस प्रकार हैं।

1. समुचित प्रजातियों का चयन
2. समुचित प्रौद्योगिकी का चयन
3. उपयुक्त संसाधनों का विकास
4. प्रभावशाली प्रबंधन

प्रबंधन के अंतर्गत ऊसर–बंजर भूमि को निम्न प्रकार वर्गीकृत कर सकते हैं।

अ. क्षारीय भूमि

ऐसी मृदाओं का ई.एस.बी. 15 प्रतिशत से अधिक तथा पी.एच.मान 7.5 से अधिक होता है। प्रमुख घुलन ील लवण के रू में सोडियम कार्बोनेट पाया जाता है। ई.एस.बी. की अधिकता मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों को प्रभावित करता है। इन मृदाओं में गहराई पर कंकड़ या कड़ी मिट्टी की परत पायी जाती है।

ब. लवणीय भूमि

जिन मृदाओं का ई.एस.बी. 15 प्रतिशत से कम तथा पी.एच.मान 8.5 से कम तथा साथ ही क्लोराइड व फॉस्फेट जैसे उदासीन लवणों की अधिकता होती है। से मृदाएं सामान्यता अधिक लवण के कारण पौधों की बढ़वार को हानि पहुंचाती हैं।

वृक्षारोपण तकनीकी

समुचित मृदा परीक्षण, ऊसर–बंजर भूमि पर वृक्षारोपण की मूलभूत जरूरतें हैं।

क. ऊसर–बंजर भूमि में वृक्षों के लिए 60X60X60 सेमी आकार के गड्ढे तथा फलदार वृक्षों के लिए 90X90X90 सेमी आकार के गड्ढ़े सबसे उपयुक्त होते हैं।

ख. गड्ढ़े अप्रैल से जून माह में खोदना उत्तम होता है।

ग. गड्ढ़े मिश्रण भूमि के परीक्षण के आधार पर किया जाना उचित होता है–जैसे कम पी.एच. मान (8.5) वाली भूमि में 2 भाग मिट्टी, एक भाग बालू तथा एक भाग गोबर की सड़ी खाद या वर्मी कम्पोस्ट मिलाई जाती है।

- अधिक पी.एच.मान वाली मृदा में 5 किग्रा. जिप्सम डालना लाभप्रद होता हे।
- ऐसे भूमि जहां कंकड़, वाली सतह हो उसे तोड़कर फिर उसमें अच्छी मिट्टी डालना चाहिए।
- प्रत्येक गड्ढ़े को जमीन की सतह से 6 इंच ऊपर तक भरा जाना आवश्यक होता हे।
- वृक्षारोपण कर सबसे सही समय वर्षा ऋतु का जुलाई से सितम्बर माह सर्वोत्तम होता है।

वृक्ष प्रजातियों का चयन

वृक्ष प्रजातियों का चयन करते समय ध्यान रखना है कि लवण प्रतिरोधी व जलवायु के अनुरूप वाली प्रजातियों का चुनाव हो। देश के सबसे बड़े ऊसर भूमि क्षेत्र पूर्वी उत्तर प्रदेश में ऊसर–बंजर भूमि विकास हेतु किए गए शोध कार्यों से पता चला है कि –

- वृक्ष की प्रोसोपिस चाइनेसिस, प्रजाति 10 पी.एच.मान व 2 प्रतिशत तक घुलनशील लवण वाली कंकड़युक्त मृदाओं में भी सफलता पूर्वक उगायी जा सकती है।
- नीम, शीशम, करंजी एवं अर्जुन मध्यक कंकड़ युक्त व ऐसी मृदा जिनमें अवमृदा में घुलनशील लवण 0.45 प्रतिशत तक व पी.एच.मान 9.0 तक हो के प्रति सहनशील है।
- देशी बबूल 9 से कम पी.एच.मान व 0.3 प्रतिशत घुलनशील लवण वाली ऊसर बंजर भूमि के अनुकूल पायी गई है।
- सामान्यतः 10 से अधिक पी.एच.मान व 3.42 प्रतिशत से अधिक लवणता वाली मृदाओं में लगभग सभी प्रजातियां असफल हो जाती हैं।
- क्षारकता सहनशील के आधार पर कुछ प्रमुख प्रजातियों का घटता हुआ क्रम, इस प्रकार है– प्रोसोसिस चाइनेसिस, बूटी, मोनोस्फोरा, नीम, शीशम, करंजी, अर्जुन, अल्वीजियालेवक, एलान्थस व एक्सेला।

ऊसर बंजर भूमि हेतु उपयुक्त बहु उद्देशीय वन्य प्रजातियां

सामान्य तौर पर ऊसर बंजर भूमि के अनुकूल निम्न बहुउद्देशीय वन्य प्रजातियां पहचानी गई हैं –

बबूल, केजूरीना, नीम, अर्जुन, महुआ, भी ाम, सुबबूल

ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी हेतु फसलों का चयन

- ऊसर बंजर भूमि में भुरू के पांच वर्षों तक धान की उसर–2 तथा बाद में सरयू–52 या एनडीआर–180, किस्मों के परिणाम संतोषप्रद पाए गए हैं।
- धान की कटाई के बाद पुआल को खेत में ही मिला देना चाहिए।
- रबी फसल के रूप में गेहूं, जौ, सरसों तथा चारा फसल के रूप में जई की सिफारिश की जाती है।

चारा फसलें

चारा फसल के रूप में नंदी (सिटेरिया), नेपियर व करनाल घास उपयुक्त पायी गयी है।

शाकीय फसलें

ऐसी मृदा में पहले पालक उसके बाद प्याज, लहसुन, टमाटर, भिण्डी, बैंगन तथा कद्दू प्रजाति की फसलें उगाने की संस्तुति की जाती है।

बंजर–ऊसर भूमि में कृषि वानिकी तंत्रों का प्रयोग

बंजर ऊसर भूमि हेतु कृषि वानिकी के निम्न चार प्रणलि को उपयुक्त पाया गया है।

1. वानिकी उद्यान प्रणाली
2. वानिकी चारा प्रणाली
3. कृषि वानिकी प्रणाली
4. कृषि वानिकी उद्यान प्रणाली

ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी प्रणाली :

इस प्रणाली से किसानों को 3–4 वर्ष बाद फल, 1–2 वर्ष बाद चारा अथवा खाद्यान्न प्राप्त होने लगते हैं और साथ में वृक्ष भी बढ़ते रहते हैं जिनकी मड़ाई छंटाई से जलाऊ लकड़ी व चारा वृक्षों के पत्तियों से चारा भी प्राप्त होता रहता है। इस प्रणाली के अंतर्गत बहु उपयोगी वृक्ष प्रजातियों जैसे– पापुलर, सफेदा, महुआ, शीशम, कैजुरीना, सुबबूल, नीम आदि के साथ साथ सरसों, गेहूं, जौ, जई, धान, (सरयू–52) एवं राई आदि की अच्छी उपज प्राप्त भी की जा सकती है।

ऊसर बंजर भूमि में वानिकी उद्यान प्रणाली :

इसके अंतर्गत वृक्ष प्रजातियों के रूप में सफेदा, महुआ, कैजूरीना, भी ाम, पापुलर व सागौन उपयुक्त होता है। फलदार वृक्षों की प्रजातियों में नरेन्द्र आंवला, 7, 10, अमरूद एल–49, बेर–उमरान व बनारसी कड़का तथा फालसा की संस्तुति की जाती है।

ऊसर बंजर भूमि में वन चरागाह प्रणाली

इस प्रणाली के अंतर्गत बहुउद्देशीय चारा वृक्ष प्रजातियों के साथ साथ पशुओं के लिए एक वर्शीय तथा बहुवर्शीय चारा फसलें लगाई जाती हैं। चारा वृक्षों में सूबबूल, शीशम, नीम, देशी बबूल, इजरायली बबूल, अल्वीजियालेवक, करंजी, ग्लोरोसीडिया के साथ चारा घास के रूप में पेनिसीटम, नंदी, ब्रेकेरिया, सिगनल व दशरथ घास की संस्तुति की जाती है।

ऊसर बंजर भूमि में वानिकी, वानिकी – उद्यान प्रणाली

इस प्रणाली के अंतर्गत वृक्ष प्रजातियों के साथ फल प्रजातियां अन्तरानुन्तरूप ढंग से लाइन में लगाई जाती है, तथा इनमें दो पंक्तियों के बीच खरीफ में धान, व रबी में जौ, गेहूं या सरसों अथवा चारा फसल जई की अतिरिक्त उपज की जा सकती है। इस प्रणाली के अच्छे उदाहरण महुआ + करौंदा + कृषि फसलें एवं केजुरीना + अमरूद + धान है।

विभिन्न कृषि वानिकी प्रणाली का भूमि के मौलिक– रासायनिक गुणों पर प्रभाव

कृषि वानिकी पद्धति के अपनाने से पूर्व तथा बाद की स्थितियों की तुलना से पता चलता है कि इन प्रणालियों के प्रयोग से मृदा का स्थूल घनत्व बी.डी., ई.सी.ई. तथा ई.एस.पी. घटते हैं तथा जैविक कार्बन, नत्रजन, फॉस्फोरस व पोटाश का प्रतिशत बढ़ता है। जिससे धीरे–धीरे ऊसर भूमि का सुधार होता है।

पुराने वन्य/ फल वृक्षों का पुनर्यवाकरण एवं भूमि प्रयोग

इस विधि का प्रयोग दो रूपों में किया जाता है।

1.पुराने एवं अनुत्पादक वृक्षों का बडिंग, ग्राफ्टिंग तरीकों से पुनर्यवाकरण करके तथा

2.पुराने वृक्षों के नीचे पड़ी बेकार भूमि पर कृषि वानिकी पद्धतियों का प्रयोग करके इस भूमि को लाभकर जोतों में परिवर्तित किया जा सकता है।

विकृत ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी एवं युवारोजगार

बेकार पड़ी ऊसर बंजर भूमि में कृषि वानिकी पद्धति के प्रयोग से न सिर्फ भूमि का सुधार होता है वरन् रोजगार के नए अवसर भी पैदा होते हैं। भारत जैसे देश में जहां गरीबी एवं बेरोजगारी का प्रतिशत दिन व दिन जिस तेजी से बढ़ रहा है उससे कुछ हद तक निजात पाने में सहायक के रूप में इस विधि से बीज संसाधन, नर्सरी उत्पादन, वितरण शोध व सलाह आदि के रूप में रोजगार के अनेक अवसर पैदा होते हैं। जिससे विभिन्न स्तरों पर बेरोजगारी का समाधान सम्भव है। इस प्रकार हम विश्व की 16 प्रतिशत आबादी व 14 प्रतिशत पशु आबादी रखने वाले अपने देश में यदि पर्यावरण संतुलन भूमि सुधार, वनोत्पादन के साथ साथ युवा रोजगार की समस्या से प्रभावकारी ढंग से निजात पाना चाहते हैं तो ऊसर बंजर भूमि का कृषि वानिकी द्वारा सुधार का तरीका अपार सम्भावनाएं प्रस्तुत करता है।

———

ट्रैक्टर की सामायिक देखभाल, इंजन की साधारण खराबियां और सम्भाल

चन्द्रशेखर सहाय एवं जी.आर.देशमुख

हरित – क्रान्ति के साथ साथ कृषि में मशीनों का प्रयोग भी बढता जा रहा है। ट्रैक्टर जैसी मशीन एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण मशीन सिद्ध हुई है। शक्ति के इस साधन का प्रयोग ट्यूबवेल से पानी निकालने, खेत की जुताई एवं समतलन करने, बिजाई, कटाई तथा गहाई, ढुलाई, चारा काटने तथा गन्ना आदि पेरने जैसे कार्यों में किया जाता है। ट्रैक्टर के इंजन में किसी भी तरह की खराबी या रुकावट आ सकती है। इसलिये ट्रैक्टर की नियमित देखभाल करना अति आवश्यक है, ताकि ट्रैक्टर लम्बे समय तक बिना रुकावट के कार्य करता रहे। थोड़ी सी लापरवाही पर भी कीमती ट्रैक्टर जल्दी खराब हो सकता है। सामयिक देखभाल से अभिप्राय यह है कि ट्रैक्टर की सफाई, इसके समय समय पर कार्यक्षमता की जांच पड़ताल तथा इसके कुछ हिस्सों को निर्धारित समय के बाद बदलने आदि से है। ट्रैक्टर की देखभाल के लिये उसके साथ ही दी गई पुस्तिका का अध्ययन करना आवश्यक है। उसमें दी गई बातों को ध्यान में रखते हुये ट्रैक्टर की सफाई व देखभाल करते रहना चाहिये। देखभाल की नियमित समय **सारिणी** आगे दे रहे हैं।

ट्रैक्टर चालू करने से पहले आवश्यक बातें

ट्रैक्टर को चालू करने से पहले इसके कुछ भागों एवं प्रणालियों की जांच करना बहुत आवश्यक है। इससे ट्रैक्टर की खराबियों का समय पर पता लग जाता है। इससे ट्रैक्टर अधिक विश्वसनीय हो जाता है। ट्रैक्टर की जांच करने से यह खेत में बिना किसी खराबी के काम करता रहता है और दुर्घटनायें भी कम होती हैं। पुर्जों की समय समय पर जांच करने से ट्रैक्टर के रख रखाव और चलाने पर कम खर्चा आता है। ट्रैक्टर के इंजन को चालू करने से पहले आगे दी गई प्रणालियों पर विशेष ध्यान दें।

1– **स्नेहन प्रणाली**

क– इंजिन में मोबिल आयल की मात्रा की जांच करें डिपिस्टिक के लेवल तक तेल भरें।

ख– प्रणाली में तेल के रिसाव की जांच करें।

ग– निम्न जोड़ों में ग्रीस अथवा तेल दें :

1– अगला एक्सेल, स्पेन्डल और हब

2– हाईड्रोलिक स्टीयरिंग के जोड़

3– लिंक लेवलिंग बाक्स और स्क्रू तथा

4– ब्रेक पायदान असेम्बली

2– शीतलन प्रणाली

क रेडियेटर में पानी की जांच करें। यदि कम हो तो डालें (यह केवल पानी से ठंढा होने वाले ट्रैक्टर में होता है। हवा से ठंढे होने वाले ट्रैक्टर में रेडियेटर नहीं होता।

ख इस बात का ध्यान रखें कि रेडियेटर एवं पाईप के जोड़ों से पानी का रिसाव न हो यदि रिसाव हो तो रेडियेटर को तुरन्त ठीक करायें।

ग पंखे की बेल्ट के खिंचाव की जांच करें। यह 10–15 मिलीमीटर से अधिक नहीं होना चाहिये।

3– वायुशोधक प्रणाली

क वायुशोधक (एयर क्लीनर) में तेल की मात्रा की जांच करायें। कम हो तो निशान तक भरें। यदि तेल गंदा हो गया हो तो तेल की कटोरी को डीजल से साफ करके नया तेल निशान तक भर दें।

ख इस बात का ध्यान रखे कि हौज पाईप क्लेम्प कसे हुये हो, ताकि गन्दी हवा इंजन में न जा पाये और केवल वायुशोधक द्वारा साफ होने के बाद यह इंजन में पहुंचें।

ग ड्राई एयर क्लीनर के पेपर एलीमेन्ट को हवा के दवाब से साफ करें। दवाब 7 बार तक ही होना चाहिये।

4– ईधन प्रणाली

क तेल की टंकी की जांच करें। इसमें डीजल कम हो तो भर दें। यह कार्य शाम को ट्रैक्टर से कार्य समाप्त करने के तुरन्त बाद ही करना चाहिये। ऐसा करने से डीजल टंकी में नमी इकट्ठी नहीं होती और यदि डीजल में कोई गन्दगी हो तो वह टंकी के पेंदे में बैठ जाती है।

ख यह भली प्रकार जांच करलें कि तेल की टंकी के नीचे तेल की टोंटी खुली हुई है कि नहीं यदि बन्द हो तो उसे खोल दें। कभी–कभी ऐसा हो जाता है कि तेल की टोटी बन्द रह जाती है अतः डीजल नीचे नहीं जाता। फिल्टरों से भरा होने के कारण ट्रैक्टर थोड़ी देर तक तो चलता है, टंकी से तेल न मिलने के कारण बन्द हो जाता है। इससे नलकियों में हवा भर जाती है। इस हवा को बाहर निकालने व इंजन को चालू करने में काफी समय लग जाता है।

ग इंजन को सरलता पूर्वक चालू करने के लिये हैण्ड प्राईमिंग पम्प (फ्यूल फीड पम्प) का प्रयोग करें।

घ पाईपों से किसी प्रकार का रिसाव नहीं होना चाहिये।

5– बैटरी की जांच करें, यदि आवश्यक हो तो इसमें डिस्टिल वाटर डालें। बैटरी की प्लेटें पूरी तरह पानी में डूबी होनी चाहिये। बहुत अधिक पानी भी नहीं भरें। बैटरी के कनेक्शन, (जोड़) कसे हुये होना चाहिये।

6– ब्रेकों की अच्छी तरह जांच करनी चाहिये। यह देखना चाहिये कि ब्रेकों में लाक तो नहीं लगा है। यदि लाक लगा हो तो उसे खोलकर ब्रेकों को फ्री कर देना चाहिये।

7– ट्रैक्टर के पहियों की जांच करे। यदि हवा कम हो तो निर्धारित प्रेशर तक भरे। अगले पहिये में 1.8 – 2.1 बार तथा पिछले पहियों में 1.0 –1.7 बार का दवाब होना चाहिये।

8– इस बात की जांच कर लें कि तेल विच्छेद लीवर (फ्यूल–कटआफ लीवर) पूरी तरह से अन्दर कर दिया गया है। यदि यह बाहर की ओर खिंचा हुआ हो तो दवा कर अन्दर कर देना चाहिये। कुछ ट्रैक्टरों में यह लीवर नहीं होता।

9– इस बात की जांच करें कि अगले तथा पिछले पहियों में नट बोल्ट कसे हुये हों।

10– गियर लीवर तथा पी.टी.ओ. लीवर न्यूट्ल अवस्था में होना चाहिये।

11– हाथ वाले थ्राटल लीवर को आधा नीचे कर दें।

12– क्लच पैडल को पूरा दबायें।

13– चालू करने वाली चाबी को स्विच में लगाकर दाई ओर घुमायें तथा इंजन चालू होने पर स्विच चाभी को छोड़ दें। यदि एक बार में इंजन स्टार्ट नहीं होता तो फिर से स्टार्ट करने का प्रयत्न करने से पहले थोड़ी देर रुक जायें।

14– ड्राईवर की सीट को छोड़कर किसी दूसरी जगह से इंजन को चालू न करें। केवल सीट पर बैठने के बाद ही इंजन चालू करें।

15– इंजन के चालू होने पर आवश्यकतानुसार गियर लगायें। इंजन की गति को धीरे–धीरे बढायें और क्लच पैडल को धीरे–धीरे छोड़ दें और क्लच पैडल पर पैर न रखें।

16– जब ट्रैक्टर का इंजन बन्द करना हो तो थ्राटल लीवर को कम कर दें। और तेल विच्छेद लीवर को खींचे। इससे इंजन बन्द हो जायेगा।

8–10 घन्टे काम करने के बाद

1– साफ पानी से ट्रैक्टर को पूरी तरह से धोंयें

2– इंजन के पम्प में तेल की मात्रा की जांच करें। कम हो तो निर्धारित लेवल तक साफ तथा सही ग्रेड का तेल डालें।

3– डीजल की टंकी में डीजल की मात्रा की जांच करें। दिन का कार्य पूरा होने के बाद टंकी को डीजल से पूरा भर दें।

4– पानी से ठंढे होने वाले इंजन के रेडियेटर में पानी की जांच करें। यदि कम हो तो भर दें।

5– एयर क्लीनर (वायुशोधक) के तेल की जांच करें यदि तेल गन्दा हो गया हो तो बदल दें। तेल की कटोरी में दिये गये निशान तक तेल भरदें।

6– बैटरी में इलेक्ट्रोलाईट पानी ही डालें। पानी प्लेटों के ऊपर 3 मिमी तक होना चाहिये।

7– संचार एवं द्रव्य प्रणालियों के तेल की जांच करें यदि कम हो तो उचित ग्रेड के तेल से पूरा भर दें।

8– बेल्ट पुली के तेल की जांच करें।

9– टायरों में हवा के दवाब की जांच करें। अगले पहियों में सड़क पर प्रयोग के लिये 2 बार तथा पिछले पहियों में खेतों में कार्य करने के लिये 1.0 बार का दवाब होना चाहिये।

10– चिकनाई के लिये निम्नलिखित स्थानों पर ग्रीस/तेल दें।

क– अगला एक्सेल स्पेन्डेल

ख– नीचे की स्क्रू कपलिंग बाक्स और स्क्रू

ग– स्टीयरिंग जोड़

घ– ब्रेक पायदान असेम्बली

11– बैटरी के टर्मिनल बोल्ट कस दें।

12– सभी नट बोल्टों की जांच करलें। यदि कोई ढीला हो तो कस दें। विशेष रूप से अगले व पिछले पहियों तथा स्टीयरिंग के नट बोल्टों की जांच करनी आवश्यक है।

13– ईधन प्रणाली, स्नेहन प्रणाली तथा शीतलन प्रणाली में किसी प्रकार का कोई रिसाव नहीं होनाा चाहिये यदि तेल, डीजल या पानी टपक रहा है तो उसे ठीक करलें।

50–60 घन्टे काम करने के बादः

1– उपरोक्त सभी बातों की जांच करें। यदि आवश्यक हो तो ठीक करें। पंखें की बेल्ट का खिंचवा देख लें। अंगूठे के दवाब से यह 12–18 मिमी तक दबनी चाहिये।

2– बैटरी के टर्मिनलों को साफ करके इनमें पेट्रोलियम जेली लगाकर इनके कनेक्शन कस दें।

3– यदि धोंये जाने वाले तेल के फिल्टर दिये गये हैं तो उन्हें साफ करें।

4– संचार द्रव्य प्रणाली एवं द्रव्य ब्रेकों में तेल के तल की जांच करें।

5– वायुशोधक की जाली को अच्छी प्रकार से डीजल से साफ करें।

6– यदि इंजन हवा से ठंडक होने वाला है तो उसके फिंस को पानी के दवाब या हवा के दवाब (प्रेशर) द्वारा साफ करें।

7– रेडियेटर की जाली को पानी अथवा हवा के द्वारा साफ करें।

8– कुछ ट्रैक्टरों में इंजन तेल को बदलने की सिफारिश की हुई होती है। इन सिफारिशों के अनुसार ही तेल को बदलना चाहिये।

9– क्लच साफ्ट एवं क्लच बेयरिंग, ब्रेक कन्ट्रोल साफ्ट, पंखे का बेयरिंग, अगले पहिये का हब, टाईराड एण्ड तथा रेडियस राड पर ग्रीस करें।

10– यांत्रिक ब्रेकों में ''फ्री प्ले'' चेक करें। यह लगभग 15 मिलीमीटर तक होना चाहिये।

100–120 घन्टे काम करने के बादः

1– उपरोक्त सभी चीजों की जांच करें यदि आवश्यक हो तो ठीक करें।

2– क्रेंक केस ब्रीदर की सर्विस करें।

3– धुआं निकलने वाले पाइप के अन्दर जमे हुये धुये तथा कालिख को साफ करें।

4– क्लच तथा ब्रेक पायदान को फ्री प्ले को चेक करें। यह पन्द्रह मिमी के आस–पास होनी चाहिये

5– 2 या 3 बूंद मोबिल आयर जनित तथा सेल्फ प्रवर्तक की बेयरिंगों में डालें।

250 –300 घन्टे काम करने के बादः

1– सेडीमेन्ट बाउल और टंकी की टोंटी में दी गई जालियों को साफ करें।

2– स्टीयरिंग कालम के ऊपर के बेयरिंग में ग्रीस दें।

3– प्राईमरी डीजल फिल्टर को साफ करें यदि बदलने की सिफारिश हो तो बदल दें।

4– बैटरी के इलेक्ट्रोलाईट के अपेक्षित घनत्व की जांच करें। यदि यह कम है तो बैटरी की जांच करवायें। एक पूर्ण रूप से चार्ज बैटरी का अपेक्षित घनत्व 1. 230 से 1.300 तक होता हैं

5– अगले पहियों के ''टो–इन'' जांच करें और आवश्यक हो तो ठीक करें।

6– डीजल तेल की टंकी की सफाई अच्छी तरह से करें।

500–600 घन्टे काम करने के बाद

1– शीतलन प्रणाली की अन्दर से सफाई करें। इसके लिये 10 लीटर पानी में एक किलोग्राम कपड़े धोने वाला सोडा मिलाकर घोल तैयार करलें। रेडियेटर का ड्रेन प्लग खोलकर पानी निकाल लें तथा इसकी जगह इस घोल से रेडियेटर को पूरा भर दें। दिन में 8–10 घन्टे इस घोल के साथ ही ट्रैक्टर चलायें और शाम को इस घोल को निकाल कर साफ पानी भर दें।

2– प्रथम डीजल फिल्टर को बदल दें। जीटर सीरीज के दूसरे फिल्टर को भी बदल दें।

3– इंजेक्टर को निकाल कर पास के डीलर से साफ करायें तथा उसके दवाब (प्रेशर) की जांच करायें।

4– अगले पहियों के हब के बेयरिंगों को धोकर साफ करें और ग्रीस भरकर दोबारा लगा दें।

5– राकर के ऊपर का ढक्कन हटाकर बाल्ब स्पिरिंग और टैपेट की जांच करें।

6– जनित्र तथा सेल्फ प्रवर्तक की जांच की करें और उनके बुश घिस गये हों तो बदल दें।

7– क्रेंक केस ब्रीदर तथा पाइप को साफ करें।

8– अगले पहियों की टो इन चेक करें। यह 3–6 मिमी के बीच होती है।

1000 घन्टे काम करने के बादः

1– दूसरे डीजल फिल्टर बदल दें।

2– निम्नलिखित का तेल बदल दें :

क– गियर बाक्स

ख– स्टीयरिंग गेर हाऊसिंग

ग– हाईड्रोलिक प्रणाली

घ– बेल्ट पुल्ली

न– फाईनल ड्राईव

3 पंखे की बेयरिंग की जांच करें।

4– सिलेन्डर हेड को खोलकर उस पर जमी हुई कालिख को साफ करें एवं आवश्यकता होने पर वाल्व को ग्राइन्ड भी करें। नया हेड गैस्केट लगायें।

.....

बकरी पालन : सीमान्त एवं लघ किसानों हेतु लाभकारी व्यवसाय

साधना पाण्डेय , आर.के. शर्मा, पुरुषोत्तम शर्मा एवं विकास कुमार

विश्व में दूध देने वाली बकरियां उप आर्द्र जलवायु में अधिक पायी जाती हैं जबकि एशिया एवं अफ्रीकी देशों में द्विउद्देशीय बकरियां पायी जाती हैं जिनका उपयोग मांस एवं दूध के लिए किया जाता है। भारत में लगभग 20 प्रजातियां है। जिनमें जमुनापारी एवं बीटल दूध के लिए उपयुक्त पायी जाती हैं। बकरी को गरीबों की गाय मानते हैं। इसलिये गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले ग्रामीणों की आय का स्रोत 40 प्रतिशत बकरी पालन से प्राप्त होता है। बारानी खेती वाले क्षेत्र में बकरी पालन मुख्यतया भूमिहीन व सीमान्त किसानों के जीविकोपार्जन का साधन है। ऐसे क्षेत्रों में जहां गाय, भैंस पालना भौगोलिक स्थिति के कारण सम्भव नहीं है। बकरी पालन न केवल जीविका प्रदान करता है बल्कि उक्त किसानों को पोषण सुरक्षा भी प्रदान करता है। गाय की तुलना में बकरी का दूध व मांस (चिकन) लोग अधिक पसंद करते हैं। बकरी का दूध बच्चों एवं रोगी के लिए सुपाच्य एवं अधिक खनिज लवण युक्त होता है। सीमान्त एवं उवड़ खाबड़ भूमि जिस पर खेती करन सम्भव नहीं है ऐसी भूमि पर बड़े जानवर गाय एवं भैंस के स्थान पर बकरी पालन आसानी से किया जा सकता है बहुत कम खर्चे पर बकरी पालन किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बकरी पालन एक व्यवसाय के रूप बहुत बड़ी संख्या में लोगों द्वारा अपनाया जाता है, विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विश्व की 70 प्रतिशत जनसंख्या गाय का दूध पीने से इलर्जी की बीमारी – पेट दर्द, गैस त्वचा एवं कान के रोग हो जाते है। लेकिन बकरी के दूध से कम होती है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार जानवरों में बकरी पालन सबसे पहले शुरू किया गया। हजारों वर्ष पहले से बकरी का दूध, मांस, बाल एवं त्वचा का उपयोग विश्व के कई देशों में किया जाता रहा है।

तालिका–1 बकरी क दूध में पाये जाने बाले पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम दूध)

प्रोटीन ग्राम	काबोहाइड्रेट ग्राम	वसा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	खनिज तत्व मिलीग्राम
3.7	4.7	5.7	84	0.8

बकरी की प्रजातियां :

अधिकतर बकरियों की प्रजातियां उत्तर–पश्चिम क्षेत्रों में पायी जाती है। इनका आकार एवं शरीर भारी एवं उत्पादकता अधिक है। कुछ प्रजातियों जमुनापारी, बीटल, थकराता, सूरती, बरबरी आदि। पूर्वी क्षेत्र में पायी जाने वाली बकरी केवल लेक, बंगाल है। यह प्रजाति अधिक कीमत वाली मांस एवं उत्कृष्ट चमड़ी के लिये प्रसिद्ध है। जलवायु आधारित बकरी की प्रजातियों को निम्न प्रकार सारणी में दर्शाया गया है।

1.उत्तर–पश्चिम, केन्द्रीय शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र :

इस क्षेत्र के अंतर्गत पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात एवं उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश के मैदानी भाग शामिल हैं।

तालिका–2 बकरी की विभिन्न प्रजातियां एव उनके गुण

क्र. सं.	बकरी की प्रजाति	वजन कि.ग्रा.	आकर (लम्बाई) X गले की चौड़ाई से. मी	रंग	उत्पादन किग्रा.	बच्चों की संख्या
1.	जमुनापारी	40–50	75 X 76	सफेद हल्का पीला एवं ब्राउन	1.5–2.0	1–2
2.	बरवरी	24	58–60	सफेद रंग में ब्राउन धब्बे	7.5–1.0	2–3
3.	वीटल	35–40	70 X 73	काला या ब्राउन	1.5–2.0	1–2

				में कई प्रकार के धब्बे		
4.	**सूरती**	32	66 X 71	सफेद	2	1
5.	**मारवारी**	26	63 X 68	घने बालों के साथ काला रंग	.5 एवं 300 ग्रा. ऊन प्रतिवर्ष	1–2
6.	**मेहसाना**	32	68 X 72	कान पर काले रंग पर सफेद रंग के धब्बे	1 एवं 200 ग्राम	
7.	**झकराना**	45	77 X 79	काला, कान पर सफेद रंग के धब्बे	2–3	2
1.	**ओसमान वाड़ी**	32	66 X 71	काला एवं सफेद रंग पर ब्राउन धब्बे	.5–1.5	2
2.	**माल बारी**	31	63 X 67	सफेद से काला रंग	1–2	
3.	**संगमनेरी**	29	62 X 71	सफेद, काला, ब्राउन एवं अन्य	.5–1.0	
1.	**बंगाल**	14–20	51–55 ग 59–63	क्ला, ब्राउन, भूरा सफेद, कान के पास में हल्के धब्बे	–	
2.	**गंजम**	31	67 X 74	काला	.25–.30	
1.	**चंगथांगी(पसमीना) का मीरी, अंगोरा**	20	52.5 ग 65	सफेद, काला, भूरा या ब्राउन	ऊन 215 ग्रा.	
2.	**गड्डी**	25	65 X 69	सफेद, काला एवं ब्राउन	ऊन 300 ग्राम	

बकरी का खान पान :

1.बकरी का उपरी होंठ चलायमान होने के कारण छोटी से छोटी घास एवं पत्ती आसानी से खा सकती है।

2.मिटटी लगी हुई फास पत्ती के अतिरिक्त किसी भी प्रकार का चारा खा सकती है।

3.बकरी के बच्चों का आमाशय जन्म के समय विकसित नही होता इसलिए 2–3 सप्ताह तक दूध एवं चारा पत्ती खाती है। 3–4 सप्ताह बाद बकरी का चारा खाने के लिये आमाशय पूर्ण विकसित हो जाता है।

4.बकरी सदैव हवा में लहराती झाड़ियां खाकर रह सकती है। इससे धीमी गति से बढ़वार एवं उत्पादन कम होता अधिक दुग्ध उत्पादन वं मांस की पैदावार के लिये संतुलित राशन में दलहनी चारा एवं दाना खिलाना चाहिये।

तालिका–3 उम्र के अनुसार बकरी का खान पान

उम्र	**खाद्य**	**मात्रा / प्रतिदिन**
जन्म से 3 दिन तक 3 दिन से 3 सप्ताह	खीस पनी, नमक	 450 सीसी
3 सप्ताह–4 सप्ताह	दूध, कीपर (पत्ती), लूसर्न, हे, पानी, नमक	450 सीसी 450 ग्राम
4 माह से अधिक	दाना	450

गर्भित बकरी	दाना, लूसर्न, सूखा चारा, पानी, नमक	450–500 ग्राम
दुधारू बकरी	दाना, मिनरल, नमक मोलोसिस (दाने के अनुपात का)	350 ग्रा./ लीटर दूध पर 1.1, 5–7 प्रति ात
बकरा	चरागाह पर चराई चराई, दाना	अप्रजजन काल 400 ग्राम प्रजनन काल के समय

तालिका–4 घरेलू स्तर पर किडस्टार्टर एव दाना बनाने की विधि

वजन किग्रा.	दूध ग्राम		दाना मिक्चर किडस्टार्टर ग्राम	हरा चारा कि.ग्रा.	अन्य
	सुबह	शाम			
2.5	200	200	–	–	तीसरे दिन
3.0	250	250	–	–	दसवें दिन
3.5	300	300	–	–	एक महीने
4.0	300	300	–	–	1.5 महीने
5.0	300	300	50		
6.0	350	350	100		2 महीने
7.0	350	350	350		3 महीने
8.0	300	300	200		प्रत्येक बरसात शुरु में एवं बाद में
9.0	250	250	250		
10.0	150	150	350		
15.0	100	100	350		
20	–	–	350	1.5	
25	–	–	350	2.0	
30	–	–	350	2.5	
40	–	–	400	4.0	
50	–	–	500	5.0	
60	–	–	500	5.5	
70	–	–	500	6.0	

उपर्युक्त सारणी में दिया गया किडर्स्टाटर एवं दाना मिक्सर घर पर बनाने की विधि निम्न प्रकार है।

किडस्टार्टर	दाना मिक्सर
चना 20 प्रतिशत	15 प्रतिशत
मक्का 22 प्रतिशत	37 प्रतिशत
मूंगफली खली 35 प्रतिशत	25 प्रतिशत
गेहूं का चोकर 20 प्रतिशत	20 प्रतिशत
मिनरल मिक्सर 2.5 प्रतिशत	2.5 प्रतिशत
नमक 0.5 प्रतिशत	0.5 प्रतिशत

बकरी पालन के लाभ :

- प्रारम्भिक खर्च बहुत कम है।
- शरीर का आकार छोटा होने से रहने के लिए घर एवं प्रबंधन की समस्या कम होती है।
- बकरी 10–12 महीने की उम्र में प्रजनन योग्य हो जाती है, प्रायः 2 बच्चों को जन्म देती है कभी कभी 3–4 बच्चे तक पैदा हो जाते हैं।

- सूखे एवं बारानी क्षेत्रों में बकरी पालन दूसरे जानवरों की तुलना में आसान एवं सस्ता है।
- बकरी किसी भी जानवर के साथ चराई जा सकती है।
- बकरी के मांस में कोलेस्टरोल की मात्रा कम पायी जाती है।
- बकरी के दूध में फफूंद एवं वैक्टीरिया रोकने के गुण होते हैं।
- भेड़ की तुलना में बकरी में 2–5 गुना लाभ अधिक हैं।

प्रजनन काल

बकरी एक साल की कम से कम 30 किलोग्राम वजन की हो जाने पर इनका प्रजनन कराया जा सकता है। यह कार्य दो साल में तीन बार कर सकते हैं। एक साल से कम आयु के बकरे को प्रजनन कार्य में नहीं लगाया जाना चाहिए। एक अध्ययन में पाया गया कि इसके लिए 2 से 3 वर्ष की आयु सबसे उपयुक्त होती है।

प्रति प्रजनन मौसम में एक नर बकरे का उपयोग 20 से 25 प्रजनन के लिए किया जाता है। यद्यपि आदर्श स्थितियों में एक बकरे का उपयोग साल में 50 से 70 बार तक संभव है। प्रजनन के लिए साल में दो मौसम मार्च से मई और सितम्बर से नवम्बर उपयुक्त बताए गए हैं। बकरियों में सेस्ट्रस सायकल प्रति 15 से 18 दिन का होता है। और 39 से 48 घंटे तक रहता है। बच्चे होने का अंतराल अलग प्रजातियों व किस्मों में आठ से नौ माह रहता है।

बकरी पालन की पद्धतियां

1.सघन पद्धति :

इस पद्धति में बकरियों को बाड़े पर ही रखकर पाला जाता है। बाड़े में बकरियों को इच्छानुसार चारा, दाना और पानी उपलब्ध कराया जाता है। यह पद्धति उन क्षेत्रों में अधिकतर उपयोग में लाई जाती है जहां चरागाहों की कमी होती है। इस पद्धति से बकरी पालन में कम स्थान में अधिक बकरियां पाली जा सकती हैं और अधिक उत्पादन किया जा सकता है।

2.विस्तृत पद्धति :

यह पद्धति सघन पद्धति के बिल्कुल विपरीत है। इसमें बकरियों को दिन भर चरागाहों पर रखकर पाला जाता है एवं शाम को उन्हें बाड़े में छोड़ दिया जाता है तथा उन्हें खाने को कुछ भी नहीं दिया जाता है। इस प्रकार की पद्धति उन जगहों पर अपनाई जाती है जहां पर बीहड़ एवं अनुपजाऊ भूमि हो तथा वृक्ष एवं झाड़ियां पर्याप्त मात्रा में हों।

3.अर्द्धसघन पद्धति :

यह पद्धति सघन एवं विस्तृत पद्धति के बीच की है। इस पद्धति में बकरियों को 6–8 घंटे के लिए चरागाह में चरने के लिए भेजा जाता है और भाम को बाड़े पर वापिस लाकर उनकी आवश्यकता के अनुसार हरा चारा एवं दाने का मिश्रण दिया जाता है। इस प्रकार पशु अपने पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता को पूरा कर लेते हैं। आजकल अधिकतर बकरी पालक इस विधि द्वारा बकरी पालते हैं तथा कम लागत से अधिक लाभ प्राप्त करते हैं।

चरागाह में उपलब्ध झाड़ियों में कुछ तो पौष्टिक होती हैं परन्तु अधिकतर झाड़ियां या तो पशुओं द्वारा पसंद नहीं की जाती है अथवा वे उन्हें हानि पहुंचाती है। जाड़े अथवा गर्मी के दिनों में यह पशु अधिकतर पेड़ की पत्तियों पर निर्भर करते हैं। बकरियों की उत्पादकता झाड़ियों एवं पेड़ की पत्तियों पर मेड़ों की अपेक्षा काफी ठीक रहती है। परन्तु अधिक संतोषजनक स्थिति नहीं रहती। अतः छोटे पशुओं विशेषकर बकरियों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए उन्नत चरागाह विकसित करने की आवश्यकता है एवं उसमें परिवर्तित चराई अथवा स्थगित चक्र क्रम चराई करके पशुओं की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है।

चरागाह में चराई की विधियां :

प्राकृतिक संसाधनों पर बकरी पालन से कोई दुश्प्रभाव न पड़े इसके लिए चरागाह में पशुओं की संख्या निर्धारित करते समय चरागाह की वहन क्षमता को ध्यान में रखना चाहिए। एक समय मे केवल सीमित संख्या में चरागाह की क्षमता को ध्यान में रखना चाहिए। एक समय

में केवल सीमित संख्या में चरागाह की क्षमता के अनुसार ही पशुओं को चराना चाहिए। लगातार एवं अनियमित तथा अनियंत्रित चराई से अच्छी किस्म की घासें कम हो जाती है। अतः पशुओं को निम्नलिखित में से किसी एक विधि द्वारा चराई कराना चाहिए।

1.परिवर्तित चराई :

इस विधि में चरागाह को तीन या चार भागों में बांटकर तार द्वारा पैडक बना लिया जाता है तथा एक–एक करके बारी बार से प्रत्येक भाग में चराई कराई जाती है। उदाहरण के तौर पर पहले पैडक के सभी पशुओं दस दिन तक चराने के बाद दूसरे पैडक में 10 दिन चराई कराते हैं और इसके बाद तीसरे पैडक में 10 दिन चराई करने के बाद पहले पैडक में पशु दुबारा चरने आजाते हैं। इस प्रकार से चराई कराने के बाद सेप्रत्येक पैडक की घास की बढ़ोत्तरी करने का समय मिल जाता है।

2.स्थगित चक्र क्रम चराई :

ठस विधि में उपरोक्त विधि परिवर्तित चराई द्वारा ही पशुओं को चराई कराई जाती है। केवल इस विधि में एक भाग पैडक को बिना चराई के एक वर्ष तक अथवा घास के बीज के परिपक्व होने तक छोड़ दिया जाता है जिससे उस भाग में घास के बीज पक कर गिर जायें ताकि चरागाह की उत्पादकता कायम रहे। यह चराई की एक आदर्श विधि है।

3.लगातार नियंत्रित चराई :

इस विधि में चरागाह में पशुओं की संख्या उसकी उत्पादन क्षमता के अनुसार तय करके लगातार सभी पशुओं के एक साथ चराई कराई जाती है। लगातार चराई कराने से कुछ अच्छी किस्म की घास कम हो जाती है और उसकी क्षतिपूर्ति दुबारा बुवाई करके की जाती है अन्यथा चरागाह की उत्पादकता कम हो जाती है।

————

तीव्र जलवायु परिवर्तन के इस दौर मे चारे की उपलब्ध कैसे सुनिश्चित करें ?

विकास कुमार, सत्यप्रिय, मंजू सुमन एवं साधना पाण्डेय

हरा चारा पशुओं के संपूर्ण विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। हरे चारे की उपलब्धता वर्ष भर होने से पशुओं को सभी आवश्यक पोषक तत्व प्राप्त हो जाते है और जब पशुओं को संतुलित आहार मिलता है, तो पशु अपनी पूरी क्षमता के अनुसार उत्पादन करते है, किन्तु जैसा कि हम जानते है कि आज के समय में, जलवायु परिवर्तन बहुत ही तीव्रता से हो रहा है। इसके परिणाम स्वरूप कभी बहुत तेज वर्षा हो जाती है, तो कभी काफी समय तक सूखा पड़ जाता है। इस अनिश्चिता में, किसान चारे की फसलें सही समय पर उगा नहीं पाते हैं और यदि उगा भी लेते हैं तो उनसे उत्पादन कम होता है। क्योंकि फसलो का चुनाव अधिकतर आरम्भ मे होने वाले मौसम पर किया जाता है किन्तु कभी–कभी मौसम इतना विचलित हो जाता है कि संपूर्ण फसल की नष्ट हो जाती है। किसानो के लिए यह एक जटिल समस्या है, कि हरें चारे की उपलब्धता कैसे बनाये रखे। इस लेख के माध्यम से यहाँ कुछ महत्वपूर्ण उपाय सुझाये गए हैं, जिनसे चारे की उपलब्धता को सुनिश्चित किया जा सकता है।

1. चारे की विविध फसलो को उगाना–

चारे की विभिन्न फसलों को उगा कर मौसम के प्रभाव को कम किया जा सकता है। घास कुल के चारे जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का मे दलहनी चारों की अपेक्षा नम मौसम को सहने की अधिक क्षमता होती है। दलहनी चारे जैसे ज्वार, लोबिया, रिजका इत्यादि सूखे मौसम को अपेक्षाकृत अधिक सहन कर सकते है। अतः दोनो ही तरह के चारों का समावेश प्रक्षेत्र पर किया जाना चाहिए।

2. चारा घासो का प्रयोग–

चारा घासें जैसे नेपियर बाजरा हाइब्रिड घास, गिनी घास, अंजन, क्राइसोपोगोन घास इत्यादि में सूखा और जल भराव दोनो को ही सहने की अत्यधिक क्षमता होती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी ये चारे घासे चारे की उपलब्ध बनाये रखने में सहायक होती है। चारा घासों की जड़े भूमि में अत्यधिक गहराई तक जाती है और इस प्रकार भूमि के विभिन्न स्तरों से पोषक तत्वों को लेकर, पोषक तत्वों के व्यर्थ जाने से भी बचाती है।

3. चारा वृक्षों का प्रयोग–

विभिन्न चारा देने वाले वृक्ष जैसे सुबबूल, सहजन, गिलिरिसिडिया आदि महत्वपूर्ण वृक्ष है। इन वृक्षो से विषम परिस्थितियों में चारा प्राप्त किया जा सकता है। ये वृक्ष चारा फसलो की अपेक्षा मौसम के बदलाव को कही अधिक सहन कर सकते हैं। चारे के साथ–साथ इन वृक्षों से भूमि कटाव भी रुकता है और ईंधन भी प्राप्त होता है। इन वृक्षों को कम उपजाऊ भूमियों या खेत की मेंड़ पर लगा कर वर्ष भर हरे चारे की उपलब्धता को सुनिश्चित किया जा सकता है।

4.साईलेज का प्रयोग–

साइलेज से अभिप्राय चारे की फसल को हरी अवस्था मे ही काटकर इस प्रकार सुरक्षित किया जाता है, कि फसल के पोषक तत्वों का कम से कम ह्रास होता है। साईलेज उस समय बनाया जाता है जब हरे चारे की अत्यधिक उपलब्धता होती है और उस समय प्रयोग किया जाता है। जब चारे की कमी होती है। जिन फसलों में स्टार्च की मात्रा अधिक होती है उन फसलों से अच्छा साईलेज बनाया जा सकता है। साईलेज खिलाने से जानवरों को सभी आवश्यक तत्व मिल जाते हैं और उनकी उत्पादक क्षमता बनी रहती है।

5. हे का प्रयोग–

हरे चारे को काटकर छाया मे अच्छी तरह से सूखाया जाता है और इस प्रकार सूखे हुए चारे को 'हे' कहते है। दलहनी चारा फसलो से अच्छा और पोष्टिक 'हे' तैयार किया जाता है। 'हे' को पशु भी बड़े चाव से खाते हैं। अतः योजनाबद्ध तरीके से 'हे' बनाने पर प्रतिकूल परिस्थितियो में भी हरे चारे की कमी को पूरा किया जा सकता है।

6. जल निकास की उचित व्यवस्था–

अधिक वर्षा के समय ज्यादातर सभी फसलों की जड़ जलभराव के कारण जल जाती है। इस स्थिति को रोकने की योजना वर्षात से पहले ही कर लेनी चाहिए। वर्षा आने से पहले ही खेत में ढाल के अनुसार जल निकास के लिए उचित व्यवस्था कर लेनी चाहिए। क्योंकि एक बार वर्षा प्रारम्भ होने के बाद खेत में घुसकर नालियां बनाना बहुत कठिन होता है। पूरे खेत में घने खरपतवार उग जाते हैं, जिनके बीच में कार्य करना मुश्किल होता है और अधिकतर वर्षा

के रुकने का इन्तजार किया जाता है। अतः जल निकास की पूरी रूपरेखा की योजना वर्षा के आरम्भ से पहले ही तैयार कर लेनी चाहिए जिससे खड़ी फसल में जलभराव कम से कम समय के लिए हो और उत्पादन पर पड़ने वाला प्रतिकूल प्रभाव कम किया जा सके।

7. सिंचाई के साधनो की सुनिश्चिता–

कम वर्षा की स्थिति में सिंचाई के साधनों की अत्यंत आवश्यकता होती है और कभी–कभी कई बार सिंचाई करनी पड़ती है। बिजली और डीजल से चलने वाले दोनो की तरह के पंपो की स्थिति की पहले से ही देख लेना चाहिए। डीजल की आवश्यक मात्रा को सुनिश्चित कर लेना चाहिए, क्योंकि फसल की क्रांतिक अवस्था मे सिंचाई न मिलने पर उत्पादन बहुत अधिक कम हो जाता है।

8. अन्य फसलों के उप–उत्पाद

अन्य अनाज और दलहनी फसलों के उप–उत्पादो जैसे चना, मटर के पत्तों और गन्ने के अगोलों का भी सही प्रयोग करना चाहिए। इन उत्पादो का प्रयोग करने से हरे चारे की कमी को विषम परिस्थितियो में काफी कम किया जा सकता है।

9. फसल के खरपतवारो का प्रयोग–

विभिन्न फसलो में होने वाले खरपतवारो को भी चारे के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इससे न केवल फसल की उत्पादकता बढ़ती है बल्कि चारे की उपलब्धता भी बढ़ जाती है।

10. विविध कृषि प्रणालियाँ का प्रयोग–

विभिन्न कृषि प्रणालियाँ जैसे मिश्रित खेती, सहचरी खेती बहुस्तरीय खेती, कृषि वानिकीकरण आदि का प्रयोग कर मौसम से होने वाले दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है।

11. संसाधनो का संरक्षण–

प्रक्षेत्र पर उपस्थित विभिन्न संसाधनो का उचित प्रयोग और संरक्षण किया जाना चाहिए प्रक्षेत्र के महत्वपूर्ण संसाधन जैसे बल, पोषणतत्व, मृदा आदि को बचाये रखना चाहिए भून्य जुलाई और फसल अवशेषों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

12. मौसम और आपदा पूर्वानुमान सेवाओं का प्रयोग–

शीघ्र आपदा चेतावनी तंत्र और आकस्मिक कार्य योजना के आधार पर फसल उगाने से मौसम के दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है इस हेतु लघु, मध्यम व दीघ्रकालिक मौसम व जलवायु बहलाव संबंधित भविष्यवाणी की सेवाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए। ये सेवायें कृशि विज्ञान केन्द्रों, जिला कृषि विभाग और कृषि संस्थानों/विश्वविद्यालयों से प्राप्त की जा सकती है। सभी अखबारो में भी स्थानीय मौसम की भविष्यवाणी की जाती है।

13. फसल बीमा द्वारा मौसम से हुए नुकसान की भरपाई–

फसलों का बीमा किया जाना चाहिए। इससे फसलों को मौसम से हुए नुकसान की कुछ सीमा तक भरपाई की जा सकती है और किसान को कुछ रूपये प्राप्त हो जाते हैं जिससे अगली फसल की बुवाई की जा सकती है।

इस तरह हमने देखा कि विषम परिस्थितियों में भी यदि योजनाबद्ध तरीके से कार्य किया जाए तो चारे की उपलब्धता को बनाये रखा जा सकता है और यदि चारे की उपलब्धता बनी रही है तो पशुओं होने वाला उत्पादन भी नियमित रहता है और किसान की आय मे भी कमी नहीं होती है।

———————

चारा उत्पादन एवं पशुपालन प्रबंधन में महिलाओं का योगदान

मंजू सुमन एंव अशोक कुमार

हमारा समाज मानव +पशु पक्षियों से मिलकर बना है जिसको हम मानव समाज कहते हैं। मानव एवं पशु एक दूसरे के पूरक हैं, भारत एक कृषि प्रधान देश है, कृषि के लिए पशुपालन नितान्त आवश्यक है, जबसे पशुपालन प्रारम्भ हुआ इसकी जिम्मेदारी महिलाओं ने पूर्ण निष्ठा से उठाई है। जनसंख्या के हिसाब से भारत आज विश्व में दूसरे स्थान पर है और पशुपालन एवं दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान पर है। 80 प्रतिशत ग्रामीण कृषि, पशुपालन से जीवनयापन करते हैं। प्राचीन समय में कृषि से भी पूर्व मानव ने पशु पालन शुरु किया था। जिसका श्रेय अधिकांश महिलाओं को ही जाता है। केवल पशुपालन ही नहीं, वरन कृषि, भोजन, गृह प्रबंधन, एवं पशु आहार के उत्पादन में विशेष योगदान है।

भारत विश्व का सर्वाधिक दुग्ध उत्पादन करने वाला देश है। देश की ग्रामीण अर्थवयवस्था में होने वाली आय का लगभग 25 प्रतिशत पशु पालन से आता है। ग्रामीण क्षेत्र में पशुपालन रोजगार एंव आमदनी का सुदृढ़ आधार तथा लघु सीमान्त कृषकों, भूमिहीन ग्रामीण महिलाओं के लिए जीवन दायक है। बकरी गरीबों की गाय कही जाती है। बकरी पालन में पिछले दो दशकों में पशुपालन में वार्षिक वृद्धि 4 –5 प्रतिशत रही है, जबकि कृषि में यह 2 प्रतिशत है। वर्ष 2007 की पशुगणना के अनुसार हमारे देश में गायों की संख्या 199.1 मिलियन तथा भैंसों की संख्या 105.3 मिलियन है। वर्ष 2011–12 में कुल दुग्ध उत्पादन 121.8 मिलियन टन था।

पशुओं को खिलाने के लिए चारे की आवश्यकता होती है। हमारे देश में चरागाहों का क्षेत्रफल फसल उत्पादन एवं शहरी विकास के कारण घटता जा रहा है। पैदावार की दृष्टि से चरागाह बहुत ही अविकसित हैं। उन्नतशील प्रजातियों की कमी है। साथ ही साथ प्रमुख केन्द्र तथा इकाइयों में सहभागिता की कमी हैं। चरागाह एवं गोचर भूमि का विकास चारे की उन्नतशील एंव पौष्टिक प्रजातियों का प्रयोग करके ही किया जा सकता है। इस दिशा में वर्ष भर चारा प्राप्त करने हेतु वर्ष पर्यन्त चारा पद्वति अपनाकर अधिक चारा प्राप्त किया जा सकता है।

देश में मानव एवं पशुधन की संख्या 2.4 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से तीव्रगति से बढ रही है। भारत में कृषि में कार्यरत महिला कृषि मजदूरों की संख्या सन 1961 में 27,7 प्रतिशत थी। सन 1991 –1992 में इनकी संख्या 58,1 प्रतिशत हो गई और इस समय लगभग 68 प्रतिशत है। अतः देश की बढती हुई जनसंख्या 121 करोड़ में से उत्तर प्रदेश की 20 करोड है। खाद्यान्नों की मांग के कारण देश के पशुधन तथा पशु उत्पादों पर कम ध्यान आकर्षित होना स्वाभाविक है। एक ओर अन्न उत्पादन का सपना पूरा हो सका है फिर भी खाद्यान्नों की कमी न होने पाये इसका ध्यान रखना आव यक है, जिसमें कृषि वैज्ञानिकों, कृषि कार्यकर्ताओं एवं किसानों तथा महिलाओं का विशेष योगदान रहा है। कृषक महिलाओं का अन्न उत्पादन से लेकर भण्डारण तक में महत्वपूर्ण योगदान रहता है, केवल खाद्यान्न उत्पादन ही नहीं बल्कि चारा उत्पादन में विशेष भूमिका है जिसमें जमीन की तैयारी, बीज की बुवाई, सिंचाई, निराई, गुड़ाई, फसल तथा चारे की कटाई, बीज एकत्रित करना कीट नियंत्रण के लिए पारम्परिक तथा आधुनिक दवाओं का प्रयोग करना साथ ही इसके अतिरिक्त पशुपालन में अधिकांश महिलायें सभी कार्यों जैसे :– गोबर उठाना, पशुशाला की सफाई, दूध दुहना, पशुओं को नहलाना, बर्तन साफ करना, दूध से अन्य उत्पाद बनाना, जानवरों को चारा डालना, खेत से चारा लाना आदि का शतप्रतिशत कार्य महिलायें ही करती हैं। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत यह पाया गया कि कृषि तथा पशुपालन एवं गृह कार्य जैसे सभी कार्यों में महिलायें प्रतिदिन 18–20 घंटे, चारा उत्पादन में 5:0 घंटे एवं पशुपालन के कार्यों में 5–6 घंटे कार्य करती हुई पायी गई। भारत में ही नहीं अपितु अन्य देशों में भी पशुपालन का अधिकतर कार्य महिलाओं द्वारा ही किया जाता हैं। भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी के अध्ययन में यह पाया गया है कि कृषि तथा पशुपालन के 80–90 प्रतिशत कार्य महिलाओं द्वारा ही किये जाते हैं। प्रत्येक देशवासी को सामान्य रुप से रोटी उपलब्ध हैं अब रोटी के साथ

दाल, सब्जी, दूध या दूध के उत्पादन सभी को प्राप्त होने चाहिए तब हमारी जनसंख्या में आम नागरिक हुष्ट–पुष्ट होंगे और उनकी कार्य क्षमता में भी वृद्धि हो सकेगी। यह सब फसल उत्पादन एवं पशुपालन से ही सम्भव हो पायेगा ।

चारा उत्पादन में योगदान :

पशुओं के आहार के लिए चारे उगाना आवश्यक है, महिलाओं की भूमिका फसल पैदावार के साथ चारा उत्पादन में विशेष भूमिका है। बरसीम, जई, जौ, मक्का, चावल, गेहूँ आदि में जमीन की तैयारी में 10–15 प्रतिशत भूमिका रहती है। खराब बीजों को चुनने में, सिंचाई, सीधी बुवाई, हवा में छंटाई 15 –40 प्रतिशत रहती हैं। निराई, गुड़ाई, सुखाई, अन्न भण्डारण मे 70–90 प्रतिशत रहती है। 30 से 50 प्रतिशत थ्रेसिंग तथा 75 प्रतिशत चारा कटाई में रहती हैं। बढ़ती हुई आबादी के साथ देश में चरागाहों का क्षेत्रफल घटता जा रहा हैं, पैदावार की दृष्टि से चरागाह बहुत ही अविकसित है। इस दिशा में वर्ष भर हरा चारा प्राप्त करने के लिए महिलायें भारतीय चरागाह एंव चारा अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित विभिन्न प्रजातियों मिश्रित फसल तथा बहुवर्षीय घासें तथा चारा फसल को अपना कर अधिक चारा तथा दुग्ध उत्पादन प्राप्त कर अपनी आर्थिक स्थिति में और सुधार कर सकती हैं। जैसे :– खरीफ फसल में मिश्रित फसलः–1 ज्वार+लोबिया 2, मक्का+लोबिया, 3 बाजरा+ लोबिया, एवं रबी में 1 बरसीम + जापानी सरसों 2 बरसीम + जई, ले सकती हैं, साथ ही बहुफसली फसल चक्र में बरसीम + जापानी सरसों – संकर हाथी धास + लोबिया लेकर अपने पशुओं के लिए पौष्टिक चारा प्राप्त कर सकती हैं।

चित्रः खेत में चारा काटते हुए पुरुष तथा महिलायें।

महिलाओं का पशुपालन में योगदान :

महिलाओं की पशुपालन के विभिन्न कार्यो में भूमिका अपने देश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी पशुपालन में महिलाओं की विशेष भूमिका हैं। दक्षिण एशिया में महिलायें लगभग 5 घंटा 30 मिनट प्रतिदिन पशुपालन का कार्य करती हैं। उत्तरी पूर्वी थाईलैण्ड में 45 प्रतिशत कार्य महिलायें करती हैं। बुन्देलखण्ड में किये गये सर्वेक्षण के परिणामों में पाया गया की महिलायें पशुपालन के विभिन्न कार्यों को करती हैं, जिसमें पशुशाला की सफाई, 83 प्रतिशत, जानवरों को पानी पिलाना, 89 प्रतिशत, दूध निकालना /दुहना 97 प्रतिशत, बीमार पशुओं की देखभाल 90 प्रतिशत, चारे की कुट्टी करना 68 प्रतिशत एवं खेत से चारा लाना 70 प्रतिशत करती हैं। लघु एवं सीमांत कृषक महिलाओं की भूमिका अधिक पायी गई तथा बृहद किसाान महिलायें पशुपालन के सभी कार्य नहीं करती हैं, क्योंकि उनके यहां लधु कृषक महिलायें गोशाला की सफाई, गोबर उठाना, खेत से चारा लाना इत्यादि कार्य करती है।

चित्रः पशुओं की देखभाल करती महिला

चित्रः खेत से चारा लाती हुई महिलायें

चारा उत्पादन एवं पशुपालन में समस्याएं :

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अध्ययन में पाया कि कृषक महिलाओं को पशुपालन में विभिन्न समस्याओं का सामना करना पडता है। सबसे अधिक व प्रथम समस्या 100 प्रतिशत आर्थिक पाई गई तथा ग्रामीण महिलायें अशिक्षित तथा उनमें वैज्ञानिक ज्ञान का अभाव 99 प्रतिशत पाया गया, तृतीय स्थान पर उन्नत पशुजाति उपलब्धता की कमी 70 प्रतिशत, आय के स्रोत की कमी 68 प्रतिशत, महिलायें में पाई सामाजिक रीति रिवाजों तथा धार्मिक कार्यों में अधिक व्यय 65 प्रतिशत पाई गई, निम्न स्तर का चारा 62 प्रतिशत, बुन्देलखण्ड में अन्ना प्रथा प्रचलित है, जिसका मुख्य कारण अधिक पशु संख्या और उनका उचित प्रबंधन न होना गंभीर समस्या है। ग्रामीण क्षेत्रों में चारागाह की कमी की प्रमुख समस्या है, जिससे यहां की महिलाओं को बहुत दूर तक पशुओं को चराने के लिए जाना पड़ता है जिससे अधिक परेशानी होती है।

ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बिन्दु :–

कृषक महिलायें निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए चारा उत्पादन एवं पशुपालन करें तब वह और अधिक पौष्टिक चारा तथा अधिक दुग्ध उत्पादन कर लाभ उठा सकती हैं :

- ❖ सर्वप्रथम भूमि परीक्षण करायें एवं उसी के अनुसार फसल का चुनाव करें तथा उन्नत प्रजाति के बीज का प्रयोग करें, जिससे अधिक पौष्टिक चारा प्राप्त होगा।
- ❖ चारे की कटाई के उन्नत हंसिये का प्रयोग करें जिससे थकान कम होगी ।
- ❖ महिलायें अच्छी किस्म के ही पशु रखें, चाहे पशुओं की संख्या कम हो।
- ❖ गोशाला के जमीन का फर्श पक्का हो, लेकिन अधिक चिकना नहीं होना चाहिये, वैसे ईंटों का फर्श सबसे उत्तम होता है, साथ ही महिलाओं को सफाई करने में आराम रहेगा साथ ही मक्खी मच्छर पैदा होने से बच सकती है।
- ❖ बुन्देलखण्ड में चारा खड़ा ही पशुओं को डाल दिया जाता है चारा कुट्टी कर खिलायें। चारा खिलाने के लिए नांद पक्की बना दें जिससे अतिरिक्त चारा बरबाद नहीं होगा, एवं पशु आसानी से चारा खा सकेंगे।
- ❖ पशुओं को बांधकर रखें, उन्हें संतुलित व पौष्टिक चारा खिलायें जिससे दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होगी तथा मनुष्य भी स्वस्थ रहेंगे।
- ❖ बीमार पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखें जिससे उनको संक्रमित होने से बचाया जा सके।
- ❖ दूध दुहने से पूर्व हाथों तथा बर्तनों को विशेष रुप से स्वच्छ करें जिससे संक्रमण न फैले तथा दूध दुहते समय उचित विधि अपनायें, गलत तरीके से दूध दुहने से थनों में गांठ पड़ जाती है।
- ❖ पशुओं के बीमार होने पर शीघ्र पशु चिकित्सक को दिखायें अंध विश्वास में न पड़ें ।
- ❖ सबसे मुख्य और आवश्यक तथ्य है, कि अपने पशुओं को समय–समय पर बीमारियों से बचने के टीके लगवायें जिससे पशुओं को संक्रमित होने से बचाया जा सके।
- ❖ वातावरण के अनुसार फसलों के चुनाव में परिवर्तन करें एवं अपनी सोच में सकारात्मक परिवर्तन करें तो अधिक लाभ होगा ।
- ❖ महिलायें चारा उत्पादन की वैज्ञानिक विधि की खेती के ज्ञान में बढ़ोतरी कर, कौशल हासिल करके अपनी आत्मर्निभरता एवं अपनी आय में बढ़ोतरी करें।

इस प्रकार निष्कर्ष रुप में कह सकते हैं, कि फसल उत्पादन में चारा उतपादन हो या दुग्ध उत्पादन, मुर्गीपालन या मछली पालन सभी में महिलाओं का विशेष योगदान रहता हैं। कृषक महिलायें अपने पशुपालन में ऊपर बताये गये बिन्दुओं पर अमल करके चारा उत्पादन तथा दुग्ध उत्पादन में वृद्धि कर सकती हैं। जिससे उनकी आय में बढ़ोतरी तो होगी ही तथा समाजिक स्तर में भी निश्चय ही वृद्धि होगी ।

————

संस्थान की प्रचार–प्रसार गतिविधियां

प्रशिक्षण/भ्रमण कार्यक्रम :

संस्थान के वैज्ञानिक/तकनीकी अधिकारियों द्वारा संस्थान में आगंतुक किसानों, गैर सरकारी संस्थाओं, स्कूली छात्रों एवं विभिन्न सरकारी विभागों के अधिकारियों को निम्नलिखित दिनांक में संस्थान एवं प्रक्षेत्र का भ्रमण कराया गया। भ्रमण के दौरान उन्हें चारा फसलों की विभिन्न उन्नतशील प्रजातियों, चारा उत्पादन प्रणालियों, पशुपालन तथा कटनोत्तर तकनीक/साइलेज निमार्ण /बीज प्रबंधन आदि की वृहद रूप से अद्यतन जानकारी दी गई । साथ ही उन्हें संस्थान द्वारा विकसित चारे की विभिन्न प्रजातियों व तकनीकियों, पशुधन प्रबंधन तथा परती भूमि विकास आदि विषयों की जानकारी भी प्रदान कराई गई। इस दौरान वैज्ञानिक/तकनीकी अधिकारियों द्वारा आगंतुकों की चारा उत्पादन, पशुपालन एवं प्रबंधन से संबंधित उनकी जिज्ञासाओं का समाधान कर उन्हें संस्थान द्वारा प्रकाशित संबंधित साहित्य भी वितरण किया गया।

भ्रमण

दिनांक 07.09.12 को राष्ट्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान केन्द्र, झांसी के 25 प्रशिक्षणार्थियों को भ्रमण कराया गया।

दिनांक 13.10.12 को राजघाट बसंत स्कूल, वाराणसी के 45 विद्यार्थी/शिक्षकों ने भ्रमण किया।

दिनांक 07.11.12 राष्ट्रीय कृषिवानिकी अनुसंधान केन्द्र, झांसी के 15 प्रशिक्षणार्थियों को भ्रमण कराया गया।

दिनांक 27.12.12 को कृषिवानिकी कालेज पोन्नमपेट, कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, बेंगलोर के 40 छात्र/छात्राओं ने भ्रमण किया।

प्रशिक्षण–

दिनांक 17.09.12 से 21.09.12 तक राजीव गांधी मिशन फॉर वाटर सेड ट्रेनिंग मेंनिजमेंट, भेपाल म.प्र. के प्रशिक्षणार्थियों को चारा उत्पादन एवं उपयोगिता पर प्रशिक्षण दिया गया।

———

संस्थान द्वारा पशुधन के उत्तम स्वास्थ्य एवं उत्पादकता को ध्यान में रखते हुए अपने अनुसंधान द्वारा घासों एवं चारे की निम्नलिखित उन्नत प्रजातियां, चिन्हित/विकसित की गईं।

दलहनीय चारे :

फसल	प्रजातियां	हरा चारा उपज(टन/हे.)	उगाने हेतु क्षेत्र
बरसीम	वरदान	65–70	संपूर्ण देश
	बुंदेल बरसीम–2	65–80	मध्य उत्तर पश्चिम क्षेत्र
	बुंदेल बरसीम–3	65–80	उत्तर पूर्व क्षेत्र
रिजका	चेतक	45–50	रिजका उत्पादक क्षेत्र
लोबिया	कोहिनूर	25–30	संपूर्ण देश
	बुंदेल लोबिया–1	25–30	संपूर्ण देश
	बुंदेल लोबिया–2	25–35	संपूर्ण देश
ग्वार	बुंदेल ग्वार–1	30–40	संपूर्ण देश
	बुंदेल ग्वार–2	30–40	संपूर्ण देश
	बुंदेल ग्वार–3	30–40	संपूर्ण देश
सेम	बुंदेल सेम–1	25–35	संपूर्ण देश

घासें एवं अन्न फसलें :

फसल	प्रजातियां	हरा चारा उपज(टन/हे.)	उगाने हेतु क्षेत्र
जई	बुंदेल जई–822	44–50	मध्य क्षेत्र
	बुंदेल जई–851	44–50	संपूर्ण देश
	बुंदेल जई 2001–3*	44–50	दक्षिण एवं उत्तर पश्चिम भारत
	बुंदेल जई–2004	44–50	मध्य क्षेत्र को छोड़कर संपूर्ण भारत
	बुंदेल जई 991–1	35–40	पहाड़ी क्षेत्र
	बुंदेल जई 991–2	35–40	पहाड़ी क्षेत्र
अंजन घास	बुंदेल अंजन–1	30–35	संपूर्ण देश
	बुंदेल अंजन–3	30–35	संपूर्ण देश
दीनानाथ घास	बुंदेल दीनानाथ–1	55–60	संपूर्ण देश
	बुंदेल दीनानाथ–2	60–65	संपूर्ण देश
संकर नेपियर	स्वेतिका	120–160	मध्य, उत्तरी एवं उत्तर पूर्व
बाजरा	डीएचएन–6	100	उत्तरी कर्नाटक
बाजरा	डीआरएसबी–2	40–50	कर्नाटक प्रदेश
	एवीकेबी–19	50–60	संपूर्ण देश
	जेएचपीएम–05*	70–80	दक्षिण क्षेत्र को छोड़कर संपूर्ण भारत
गिनी घास	बुंदेल गिनी–1	40–50	पंजाब,हि.प्र.,मध्य उत्तर महाराष्ट्र,तमिलनाडु
	बुंदेल गिनी–2	50–55	वर्षा आधारित अर्द्धशुष्क, शुष्क,उष्ण,उपोष्ण क्षेत्र
सेन घास	बुंदेल सेन घास–1	18–20	संपूर्ण देश अर्द्धशुष्क, उपोष्ण एवं उष्ण क्षेत्र
फुलवा घास	बुंदेल धबलु घास–1	26–30	संपूर्ण देश वर्षा आधारित बंजर भूमि
लम्पा घास	बुंदेल लम्पा घास – 03–4	25–30	संपूर्ण देश वर्षा आधारित बंजर भूमि

* चिन्हित प्रजातियां

————————

पाठकों/किसानों के विचार .....

आपके संस्थान की चारा पत्रिका के माध्यम से किसानों की अनेक समस्याओं जिज्ञासाओं व चारे की विभिन्न फसलों की रोचक जानकारी प्राप्त होती रहती है। इसके लिए आपको बहुत बहुत धन्यवाद। पिछले अंक में प्रकाशित अधिक चारे के लिए जई की नई प्रजातियां, चारा फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों का महत्व एवं प्रबंधन, थारपरकार गाय, पशु स्वास्थ्य प्रबंधन एवं कृषि विज्ञान केन्द्र : संक्षिप्त परिचय पर प्रकाशित जानकारी अच्छी लगी। यदि आगामी अंकों में भैंसों में जनन संबंधी समस्याओं और सुझाव विषय से संबंधित जानकारी प्रकाशित करें तो यह कृषकों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होगी। क्योंकि ये समस्यायें आजकल किसानों को बहुत कष्ट पहुंचा रही है।

कुशल पाल सिंह
ररूआ राय, दतिया, म.प्र.

आपके संस्थान से प्रकाशित चारा पत्रिका के माध्यम से मुझे जई की फसल से हरे चारे के साथ बीज उत्पादन की जानकारी प्राप्त हुई निश्चित ही यह बीज उत्पादन किसानों के लिए नया विकल्प के रूप में सिद्ध होगा। इसके बीज उत्पादन से होने वाले लाभों को देखते हुए मेरे अंदर भी जई का बीज उत्पादन करने की इच्छा जागृत हुई है। आशा है आप हमें ऐसी ही ज्ञानवर्धक जानकारी उपलब्ध कराते रहेंगे।

राहुल
बडागांव, जिला– झांसी उ.प्र.

मुझे पिछले अंक में प्रकाशित हरा चारा उत्पादन एवं उपयोगिता पर प्रकाशित लेख काफी ज्ञानवर्धक लगे। साथ ही पशु आहार में वैकल्पिक चारों की उपयोगिता और पशुओं के लिए लाभकारी विभिन्न चारा के बारे में सुन्दर तरह से दर्शाया गया है। इससे हमारे पास हरे चारे के विकल्प और अधिक बढ़ गए हैं। इस हेतु हम आपको धन्यवाद देते हैं।

अनिल कुमार
ग्राम, अमरौख, जिला–झांसी उ.प्र.

आपकी चारा पत्रिका के माध्यम से हम किसान भाईयों को पशुओं और चारे संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी मिलती रहती है। इससे हमें बहुत लाभ होता है।

कमलेश
मोंठ, झांसी उ.प्र.

————————

संस्थान में चारे की विभिन्न फसलों के उत्तम बीज बिक्रय हेतु उपलब्ध हैं।

संपर्क करें :

निदेशक
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
झांसी 284003 (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : 0510–2730666 फैक्स : 0510–2730833

संस्थान में पशु वीर्य (सीमेन) की उपलब्धता

संस्थान में वर्तमान में भदावरी भैंस के वीर्य की 8000 डोजेज उपलब्ध हैं। साथ ही भदावरी नस्ल के प्रजनन योग्य सांड़ बिक्रय हेतु उपलब्ध हैं।

संपर्क करें :
निदेशक
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
झांसी 284003 (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : 0510 – 2730666 फैक्स : 0510 – 2730833

gjk pkjk izkd`frd lk'kq vkgkj

gjk pkjk LoLFk lk'kq/ku

gjk pkjk mxk,a nw/k fi,a Hkjiwj

lk'kq/ku dh ;gh iqdkj gjk pkjk gekjk vf/kdkj

f[kykvks gjk pkjk cgkvks nw/k dh /kkjk

रिक्त स्थानों की पूर्ति हेतु

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

महात्मा गांधी

राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलशाली कोई तत्व नहीं है मेरे विचार में हिंदी ही ऐसी भाषा है।

लोकमान्य तिलक

हिन्दी का आन्दोलन समूचे देश को आत्म निर्भर और समृद्ध बनाने का संकल्प है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी

हिंदी देश के सबसे बड़े हिस्से मे बोली जाने वाली भाषा है । हमें इस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना चाहिए।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

देश के सबसे बड़े भू–भाग में बोली जाने वाली हिंदी ही राष्ट्रभाषा पद की अधिकारिणी है।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का प्रमुख स्त्रोत है ।

सुमित्रानंदन पंत

मैं सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ परन्तु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो मैं यह सह नहीं सकता।

विनोबा भावे

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त

हिंदी द्वारा ही सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

स्वामी दयानंद सरस्वती

जब तक आपके पास राष्ट्रभाषा नहीं , आपका कोई राष्ट्र नहीं ।

प्रेम चन्द

हिंदी विश्व की एक महान भाषा है ।

राहुल सांकृत्यायन

उत्तर और दक्षिण भारत का सेतु हिंदी ही हांक सकती है।

प्रो. चन्द्रहासिन

भारत की प्रभुसत्ता और अखंडता बनाए रखने के लिए हिंदी का प्रचार अत्यंत आवश्यक है।

महाकवि शंकर कुरूप

हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और दृढ़ करती है ।

राजर्षि टण्डन

राष्ट्रभाषा हिंदी द्वारा ही भारतीय संस्कृति की रक्षा हो सकती है।

राजर्षि टण्डन

राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा के रूप में हिंदी से बलशाली कोई तत्व नहीं है ।

लाला लाजपत राय

राष्ट्र की एकता को यदि बना कर रखा जा सकता है तो उसका माध्यम हिंदी ही हो सकता है।

सुब्रह्मणियम् भारती

हिंदी में अखिल भारतीय भाषा बनने की क्षमता है।

राजाराम मोहन राय

हिंदी सीखने का कार्य एक ऐसा त्याग है जिसे भारत के निवासियों को राष्ट्र की एकता के हित में करना चाहिए ।

श्रीमती एनी बेसेंट

अपनी मात्रभाषा बंगला में लिखकर मैं बंगबन्धु तो हो गया , किन्तु भारतबन्धु मैं तभी हो सकूँगा जब भारत की राष्ट्रभाषा में लिखूंगा ।

बंकिम चन्द्र चटर्जी

हे पृथ्वी! सभी प्राणी तुमसे ही उत्पन्न होकर तुम पर ही विचरण करते हैं। दोपाये और चौपाये सभी का तुम भरण पोषण करती हो। हे पृथ्वी! सभी जीव तुम्हारे ही बनाये हुए हैं। वे मरणशील हैं किन्तु प्रतिदिन उगा हुआ सूर्य अपनी रश्मियों से उन्हें अमृतत्व प्रदान करते हैं।

—(अथर्ववेद 12/1/15)

इतने बड़े देश में जहां इतनी भाषाएं हैं वहां देश की एकता के लिए एक कड़ी की आवश्यकता है। कोई भाषा ऐसी हो, जिसे सब बोल सकें, जो एक कड़ी की तरह सबको मिलाजुला कर रख सकें। इसलिए हिंदी को बढ़ावा देना सबका काम है।

श्रीमती इंदिरा गांधी

भारतीय भाषाएं नदियॉ हैं और हिन्दी महानदी। हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिन्दी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

रवीन्द्र नाथ ठाकुर

घर के आंगन में जैसे तुलसी दल या सुहागन के भाल पर बिन्दी, देवता के मुकुट पे जैसे फूल वैसे ही भारत के भाल पर हिन्दी।

गोविन्द प्रसाद श्रीवास्तव

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त

हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और दृढ़ करती है ।

राजर्षि टण्डन

हिंदी से किसी भाषा को भय नहीं है , यह सबकी सहोदर है ।

महादेवी वर्मा

भारतीय भाषाएं नदियॉ हैं और हिन्दी महानदी। हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिन्दी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

रवीन्द्र नाथ ठाकुर

घर के आंगन में जैसे तुलसी दल या सुहागन के भाल पर बिन्दी, देवता के मुकुट पर जैसे फूल वैसे ही भारत के भाल पर हिन्दी।

गोविन्द प्रसाद श्रीवास्तव

हिंदी सीखने का कार्य एक ऐसा त्याग है जिसे भारत के निवासियों को राष्ट्र की एकता के हित में करना चाहिए ।

श्रीमती एनी बेसेंट

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

महर्षि दयानंद सरस्वती

कभी मत सोचना कि मैं किस पद पर काम कर रहा हूं, सोचना यह कि प्रायः जिस आसन पर बैठे हैं उसके प्रति आपकी संपूर्ण निष्ठा होनी चाहिए कि हम क्या कर रहें हैं? यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने कार्य को कितनी निष्ठापूर्वक करते हैं ।

श्रीमद् भगवद्गीता

गृहस्त का घर भ एक तपोभूमि है, सहनशीलता और संयम खोकर कोई इसमें सुखी नहीं रह सकता।

जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज'

कभी–कभी जीवन में ऐसी घटनाएं घट जाती हैं,जो क्षण मात्र में मनुष्य का रूप पलट देती हैं।

प्रेमचन्द्र

जो पुरूष पवित्र होकर जगत् के लिए अपना सर्वस्व अपर्ण कर देता है,वह चक्रवर्ती से भी अधिक सत्ता भोगता है।

महात्मा गांधी

जो शत्रु तुम पर आक्रमण करते हैं, उनसे तुम मत डरो, उन मित्रों से डरो जो तुम्हारी चापलूसी करते हैं।

जनरल ओब्रगोन

दोस्ती धीरे धीरे पैदा करो, परन्तु जब करलो तो उसमें दृढ़ ओर अटल रहो।

सुकरात

कोई व्यक्ति सच्चाई, ईमानदारी तथा लोकहितकारिता के राजपथ पर दृढ़तापूर्वक चलता रहे तो उसे कोई भी बुराई क्षति नहीं पहुंचा सकती।

हरिभाऊ उपाध्याय

दृढ़ता बड़ी प्रबल शक्ति है, पुरूष के सर्वगुणों की रानी है, दृढ़ता वीरता का एक प्रधान अंग है।

प्रेमचन्द्र

धन उसका नहीं है जिसके पास है, बल्कि उसका है जो उसे उपयोग करता है।

फ्रैकलिन

यदि नारी वर्तमान के साथ भविष्य को भी अपने हाथ में लेले, तो वह अपनी शक्ति से बिजली की कड़क को भी लज्जित कर सकती है।

डॉ. रामकुमार वर्मा

न्यायाधीश में चार बातें होनी चाहिए– शिष्टतापूर्वक सुनना, बुद्धितापूर्वक उत्तर देना, गंभीर होकर विचार करना ओर निष्पक्ष होकर न्याय करना।

सुकरात

स्वाभिमानी ओर पवित्र हृदय पुरूष निर्धन होने पर भी श्रेष्ठ गिना जाता है।

लोकमान्य तिलक

प्रेम चन्द्रमा के समान है अगर वह बढ़ेगा नहीं तो घटना शुरू हो जाएगा।

सगिर

मानव हृदय में घृणा, लोभ और द्वेष वह विषैली घास है, जो प्रेम रूपी पौधे को नष्ट कर देती है।

सत्य साईं बाबा

बहादुर रोग शैया पर मरने की अपेक्षा रण क्षेत्र में मरना पसंद करता है।

महात्मा गांधी

अपनी अभिलाषाओं को वशीभूत कर लेने के बाद मन को जितनी देर तक चाहो एकाग्र किया जा सकता है।

स्वामी रामतीर्थ

वही कार्य अच्छा है जिससे बहुसंख्यक लोगों को अधिक से अधिक आनंद मिल सके।

फ्रांसिस हचिसन

सौन्दर्य मद में झूमती हुई कवि की दृष्टि स्वर्ग से भू–लोक और भू–लोक से स्वर्ग तक विचरती है।

शेक्सपीयर

गलती स्वीकार कर लेना झाड़ू बुहारने के समान है, जिससे गंदगी का नाम निशान तक नहीं रहता।

महात्मा गांधी

जो मनुष्य एक पाठशाला खेलता है वह संसार का एक जेलखाना बंद करता है।

ह्यूगो

जैसे तिनका हवा का रूख बताता है वैसे ही मामूली घटनाएं भी मनुष्य के हृदय की वृत्ति को बताती हैं।

महात्मा गांधी

जाति सेवा में शरीर को घुलाना पड़ता है यही जाति सेवा का उपहार है।

प्रेमचन्द्र

अमृत जीवन की अगर इच्छा है ,तो आत्मा की व्यापकता का अनुभव करो, सबकी सेवा करो,सबसे एक रूप हो जाओ।

इंदिरा गांधी